अप्रैल–सितंबर 2016
ISSN : 2320-7736

विज्ञान गरिमा सिंधु

अंक 97–98 (संयुक्तांक)

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
मानव संसाधन विकास मंत्रालय (उच्चतर शिक्षा विभाग) भारत सरकार
Commission for Scientific and Technical Terminology
Ministry of Human Resource Development
(Department of Higher Education)
Government of India

(ISSN : 2320-7736)

विज्ञान गरिमा सिंधु

(त्रैमासिक विज्ञान पत्रिका)

अंक 97-98
(अप्रैल-सितंबर 2016)
संयुक्तांक

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
मानव संसाधन विकास मंत्रालय
(उच्चतर शिक्षा विभाग)
भारत सरकार

अध्यक्ष की ओर से....

आयोग की त्रैमासिक पत्रिका "विज्ञान गरिमा सिंधु" का संयुक्तांक 97–98 प्रस्तुत करते हुए मुझे हर्ष हो रहा है। यह पत्रिका अनेक वर्षों से नियमित रूप से प्रकाशित हो रही है। इसका उद्देश्य वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग द्वारा अनुमोदित शब्दावली का प्रयोग करते हुए वैज्ञानिक अथवा सामान्य प्रबुद्ध पाठकों की रुचि के अनुरूप विषयों से संबंधित लेखों का प्रकाशन करना है। अनुभवी लेखकों के साथ-साथ तकनीकी लेखन में रुचि रखने वाले नवोदित लेखकों को प्रोत्साहित करना भी पत्रिका का उद्देश्य है।

प्रस्तुत अंक में परिचित विषय ओजोन छिद्र पर महत्वपूर्ण व रोचक जानकारी प्रस्तुत की गई है। गन्ने की बहुपेड़ी फसल में कार्बनिक खादों की उपयोगिता पर कृषि वैज्ञानिकों ने अपने विचार प्रकट किए है। एक अन्य लेख में जलवायु परिवर्तन के संदर्भ में वैकल्पिक परिववहन के माध्यम विषय पर उपयोगी सुझाव दिए हैं, इस अंक में लाख की खेती तथा वर्मी कम्पोस्ट विषयों पर भी लेखों का समावेश है। कोयला उत्खनन और पर्यावरणीय समस्याओं पर भी एक लेख प्रकाशित है। मधुमेह के उपचार में प्रयुक्त जड़ी–बूटियों का विशद् संकलन लेख के माध्यम से किया है, कर्ण रोगः बढ़ती समस्याएं एवं निदान में लेखको ने गंभीर विषय का रोचक और सरल भाषा में ज्ञानवर्धक विवरण प्रस्तुत किया है। अंक में नियमित स्तंभ समाचारिकी तथा अन्य लेख विज्ञान की नई उपलब्धियां भी शामिल है।

डॉ. अशोक सेलवटकर, संपादक 'विज्ञान गरिमा सिंधु' अन्य कई परियोजना एवं प्रशासनिक कार्यों में व्यस्त रहते हुए पत्रिका का सफलता पूर्वक संपादन कर रहे हैं और पत्रिका को नियमित प्रकाशन कर रहे हैं। वे साधुवाद के पात्र है।

मैं आशा करता हूँ कि सुधी पाठक गण इस अंक का पिछले अंकों की भांति ही स्वागत करेंगे। पत्रिका से संबंधित सुझावों का स्वागत होगा।

(प्रोफेसर अवनीश कुमार)
प्रधान संपादक
अध्यक्ष, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग

संपादकीय

आयोग द्वारा प्रकाशित त्रैमासिक विज्ञान पत्रिका 'विज्ञान गरिमा सिंधु' का संयुक्तांक 97–98 आपके समक्ष प्रस्तुत है। आज का युग सही मायने में विज्ञान का युग है। हर पल नई खोज व अविष्कार हो रहे है। परंतु विज्ञान के सुखों के साथ मानव ने कई बातों को नजरअंदाज किया है जिसकी वजह से कई समस्याएं उत्पन्न हुई है इन समस्याओं ने मनुष्य के जीवन में कृत्रिम बदलाव लाने आरंभ कर दिए है जिसकी वजह से मानव व मानव जीवन पर पर्याय से मानव स्वास्थ्य पर विपरित परिणाम हुए है व भविष्य में भयावह परिणाम हो सकते है। इसका कारण यह भी है कि वैज्ञानिक चेतना का अभाव। वैज्ञानिक चेतना के प्रति पढा लिखा वर्ग भी उदासीन है और भारत जैसे विशाल देश में उसके बिना पर्यावरण-पर्याय से हर जगह हर पल प्रदूषण–का कुठाराघात भारत की हर क्षेत्र की सफलता पर अप्रत्यक्ष रूप से अपना प्रभाव डाल रहा है। इन समस्याओं के शीघ्र निदान बिना भारत में स्वस्थ जीवन असंभव हो रहा है। इसलिए आवश्यक है कि वैज्ञानिक साक्षरता को बढाया जाए, इसका प्रसार हो।

इस अंक में ऐसे ही कुछ लेखों ने हमारे ज्ञान में वृद्धि की है। ओजोन व ओजोन परत पर वरिष्ठ शब्दावली विशारद एवं रसायनविज्ञानी श्री सतीशचंद्र सक्सेना ने अत्यंत उपयोगी लेख देकर विज्ञान वाचकों को लाभान्वित किया है। इसी प्रकार कोयला उत्खनन से संबधित पर्यावरण एवं स्वास्थ्य समस्याएं– लेख भी वाचकों को एक नए विषय से परिचय करवा रहा है। इन लेखों के साथ अन्य लेख भी पठनीय व ज्ञानवर्धक है। मैं लेखकों का आभारी हूँ जो समय समय पर अपने लेख भेजते रहते है जिससे पत्रिका का नियमित प्रकाशन संभव हो पाता है। इस अंक में स्थाई स्तंभ सहित कुल 15 रोचक, शिक्षाप्रद एवं ज्ञानवर्धक लेखों का समावेश है।

मैं आशा करता हूँ कि विद्यार्थी अध्यापक तथा अन्य प्रबुद्ध पाठक गण इस अंक का पिछले अंको की भांति स्वागत करेंगे तथा अपने बहुमूल्य सुझावों से आयोग को अवगत कराएंगे ताकि पत्रिका को अधिकाधिक उपयोगी बनाया जा सके।

(डॉ. अशोक सेलवटकर)
संपादक
वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग

'विज्ञांन गरिमा सिंधु' एक त्रैमासिक विज्ञान पत्रिका है। पत्रिका का उद्देश्य है– हिंदी माध्यम से विश्वविद्यालयी व अन्य छात्रों के लिए विज्ञान-संबंधी उपयोगी एवं अद्यतन पाठ्य पुस्तकीय तथा संपूरक साहित्य की प्रस्तुति। इसमें वैज्ञानिक लेख, शोध–लेख, तकनीकी निबंध, शब्द-संग्रह, शब्दावली-चर्चा, विज्ञान-कथाएँ, विज्ञान-समाचार, पुस्तक-समीक्षा आदि का समावेश होता है।

लेखकों के लिए निर्देष

1. लेख की सामग्री मौलिक, अप्रकाशित तथा प्रामाणिक होनी चाहिए।
2. लेख का विषय मूलभूत विज्ञान, अनुप्रयुक्त विज्ञान और प्रौद्योगिकी से संबंधित होना चाहिए।
3. लेख सरल हो जिसे विद्यालय/ महाविद्यालय के छात्र आसानी से समझ सकें।
4. लेख लगभग 2000 शब्दों का हो। कृपया टाइप किया हुआ या कागज के एक ओर स्पष्ट हस्तलिखित लेख भेजें जिसके दोनों तरफ हाशिया भी छोड़ें।
5. प्रकाशन हेतु भेजे गए लेख के साथ उसका सार भी हिंदी में अवश्य भेजें। लेख में आयोग द्वारा निर्मित शब्दावली का प्रयोग करें तथा प्रयुक्त तकनीकी/वैज्ञानिक हिंदी शब्द का मूल अंग्रेजी पर्याय भी आवश्यकतानुसार काष्ठक में दें।
6. श्वेत–श्याम या रंगीन फोटोग्राफ स्वीकार्य हैं।
7. लेख के प्रकाशन के संबंध में संपादक का निर्णय ही अंतिम होगा।
8. लेखों की स्वीकृति के संबंध में पत्र-व्यवहार का कोई प्रावधान नहीं है। अस्वीकृत लेख वापस नहीं भेजे जाएंगे। अतः लेखक कृपया टिकट-लगा लिफाफा साथ न भेजें।
9. प्रकाशित लेखों के लिए मानदेय की दर 250/– रुपए प्रति हजार शब्द है, न्यूनतम 150 रुपए और अधिकतम राशि 1000 रुपए है। भुगतान लेख के प्रकाशन के बाद ही किया जाएगा।
10. कृपया लेख की दो प्रतियां निम्न पते पर भेजें:
    डॉ० अशोक एन. सेलवटकर
    संपादक, विज्ञान गरिमा सिंधु
    वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
    पश्चिमी खंड – 7, रामकृष्णपुरम्
    नई दिल्ली – 110066
11. अपने लेख E-mail द्वारा तथा CD में भी (फॉन्ट के साथ) भेज सकते है। E-mail: vgs.cstt@gmail.com
12. समीक्षा हेतु कृपया पुस्तक/पत्रिका की दो प्रतियां भेजें।

सदस्यता शुल्क:	भारतीय मुद्रा	विदेशी मद्रा	
सामान्य ग्राहकों/सस्थाओं के लिए प्रति अंक	रु. 14.00	पौंड 1.64	डॉलर 4.84
वार्षिक चंदा	रु. 50.00	पौंड 5.83	डॉलर 18.00
विद्यार्थियों के लिए प्रति अंक	रु. 8.00	पौंड 0.93	डॉलर 10.80
वार्षिक चंदा	रु. 30.00	पौंड 3.50	डॉलर 2.88

वेबसाइट: **www.cstt.nic.in**
कापीराइट © 2016
प्रकाशक:
वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
मानव संसाधन विकास मंत्रालय
भारत सरकार, पश्चिमी खंड–7
रामकष्णपुरम्, नई दिल्ली – 110066

बिक्री हेतु पत्र–व्यवहार का पता:
सहायक निदेशक, बिक्री एकक
वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली
आयोग, पश्चिमी खंड–7,
रामकृष्णपुरम्, सेक्टर–1,
नई दिल्ली– 110066
दूरभाष– (011) 26105211
फैक्स – (011) 26102882

बिक्री स्थान:
प्रकाशन नियंत्रक, प्रकाशन विभाग
भारत सरकार,
सिविल लाइन्स, दिल्ली–110054

विज्ञान गरिमा सिंधु

हिंदी में वैज्ञानिक एवं तकनीकी लेखन की स्तरीय त्रैमासिकी

अंक 97-98, अप्रैल–सितंबर, 2016 (ISSN : 2320-7736)

प्रधान संपादक
प्रोफेसर अवनीश कुमार
अध्यक्ष

संपादक
डॉ. अशोक सेलवटकर

प्रकाशन–मुद्रण व्यवस्था
डॉ. पी. एन. शुक्ल
सहायक निदेशक

बिक्री एवं वितरण
इंजी. मोहन लाल मीणा
सहायक निदेशक

संपर्क सूत्र
'संपादक'

"विज्ञान गरिमा सिंधु"
वैज्ञानिक तथा तकनीकी
शब्दावली आयोग
पश्चिमी खंड-7
आर. के. पुरम,
नई दिल्ली-110066

अनुक्रम **पृ. सं.**

1.	ओजोन, ओजोन परत और ओजोन छिद्र	श्री सतीश चंद्र सक्सेना	01
2.	गन्ने की बहुपेड़ी फसल के उत्पादन के लिए पेड़ी–प्रबंधन एवं कार्बनिक खादों की उपयोगिता	प्रो० आर. एस. सेंगर मनोज कुमार शर्मा एवं सुश्री रेशु चौधरी	04
3.	जलवायु–परिवर्तन के परिप्रेक्ष्य में संधारणीय परिवहन का विकल्प	श्री संजय चौधरी एवं डॉ. नित्यानंद चौधरी	08
4.	लाख की खेती में जैवप्रौद्योगिकी : एक नया विकल्प	डॉ. विनयकुमार मिश्रा, डॉ. तमिलरसी के., डॉ. के. के. शर्मा	15
5.	प्रदूषित जल से सिंचाई और मृदा प्रदूषण	डॉ. दिनेश मणि	18
6.	कोयला उत्खनन क्षेत्र में पर्यावरणीय एवं स्वास्थ्य समस्याएँ : एक अध्ययन	डॉ. गजेंद्र कुमार नामदेव	23
7.	वर्मी कंपोस्ट	डॉ. सी. पी. सिंह	27
8.	मधुमेह के उपचार में उपयोगी पारंपरिक जड़ी बूटियाँ	डॉ. चंद्र प्रकाश शुक्ल	30
9.	मरु क्षेत्र के औषधीय पौधे	एन.के. बोहरा	38
10.	कर्ण रोग: बढ़ती समस्याएं एवं निदान	सुश्री रेशमा कुमारी एवं प्रो.आर.सी. दुबे	44
11.	विज्ञान समाचार	डॉ. दीपक कोहली	56
12.	माटी की कहानी	श्री नवनीत कुमार गुप्ता	61
13.	विज्ञान की नई उपलब्धियाँ	प्रेमचंद्र श्रीवास्तव	13
14.	जल प्रदूषण	डॉ.एन.के. चतुर्वेदी	71

परिशिष्ट – आयोग के प्रकाशनों की सूची

इस पत्रिका में प्रकाशित लेखों, अभिव्यक्त विचारों आदि से वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय या संपादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है। यह पत्रिका वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग द्वारा निर्मित शब्दावली के प्रचार–प्रसार के साथ हिंदी में वैज्ञानिक लेखन को प्रोत्साहित करने के लिए त्रैमासिकी के रूप में प्रकाशित की जाती है।

1

ओजोन, ओजोन परत और ओजोन छिद्र

सतीश चंद्र सक्सेना

हम सभी ओजोन परत और ओजोन छिद्र के बारे में जानते है क्योंकि, इन विषयों पर समय–समय पर समाचार पत्रों तथा पत्रिकाओं में जानकारी प्रकाशित होती रहती है। फिर भी, इनके बारे में अधिक से अधिक जानने की प्रबुद्ध वर्ग एवं विद्यार्थियों की जिज्ञासा रहती हैं।

ओजोन क्या है?

ऑक्सीजन तत्व प्रकृति में दो रूपों में पाया जाता है। ऑक्सीजन का प्रचुर रूप वह है जिसमें ऑक्सीजन के दो परमाणु परस्पर संयोजित रहते है और ऑक्सीजन अणु बनाते हैं। यह वही ऑक्सीजन है जिसमें हम श्वास लेते हैं। सूर्य के प्रकाश के द्वारा ऑक्सीजन अणु पुनः दो परमाणुओं में विघटित हो जाता है। ये परमाणु संयोजित होकर ऑक्सीजन अणु (O_2) अथवा ओजोन (O_3) बनाते हैं। वायुमंडल की लगभग 90% ओजोन, समतापमंडल में संकेंद्रित है। यह वायुमंडल की वह परत है जो भूतल से 10 से 50 km की ऊचाई के मध्य स्थित है। यह परत परिणाम यह होता है कि ओजोन के नष्ट होने की दर, ओजोन के निर्माण होने की दर से अधिक हो जाती हैं।

क्लोरोफ्लुओरो कार्बन यौगिक (CFC) ओजोन विनाश के लिए मुख्यतः उत्तरदायी है। प्रशीतकों, प्लास्टिक उद्योग और रेफ्रीजरेटर एयर कंडीशनरों, शरीर सुगंधक, शरीर दुर्गंधनाशक जैसे ऐश आराम के साधनों और प्लास्टिक उद्योगों से इन यौगिकों का उत्सर्जन होता है। दुर्भाग्य की बात यह है कि ये यौगिक वायुमंडल में पहुँच कर आसानी से विघटित नहीं होते और अति दीर्घकालिक संकट उत्पन्न करते हैं।

सन् 1987 में मॉन्ट्रियल प्रोटोकाल पर हस्ताक्षर के समय इन CFC यौगिकों को नियंत्रित करने के लिए प्रथम वैश्विक स्तर पर पहल की गई थी। इस प्रोटोकाल के अनुसार लगभग 100 रसायनों के उत्पादन को योजनाबद्ध तरीके से नियंत्रित करने का प्रस्ताव था। इस प्रस्ताव के अनुसार विकसित देशों में हाइड्रोफ्लुओरो कार्बनों (HCFCs) का समापन 2030 तक और विकासशील देशों के लिए यह समयसीमा 2040 तय की गई थी। इन पहलों के कारण ओजोन का क्षय जो 1998 में 26 मिलियन वर्ग किमी. तक फैला था वह 2009 तक घटकर 22 मिलियन वर्ग किमी. रह गया। आधुनिक अध्ययनों से अनुमान लगाया गया है कि कदाचित 2050 तक पूर्ण मुक्ति पाना संभव नहीं हो सकेगा और यह समय सीमा पर्याप्त अधिक भी हो सकती है।

ओजोन परत और ओजोन छिद्र क्या है?

वायुमंडल में सतत ओजोन परत जैसा कुछ भी नहीं है और न ही इस परत में कोई छिद्र है? ओजोन वायुमंडल में अन्य गैसों की भांति ही परिक्षेपित है। वायुमंडल में ओजोन का घनत्व, डॉबसन मात्रकों में मापा जाता है। वायुमंडल में ओजोन की औसत मात्रा लगभग 300 डॉबसन मात्रक है। यदि ओजोन की इस संपूर्ण मात्रा को एक वायुमंडल दाब और 0° सेल्सियस पर संपीडित किया जाए तो इससे पृथ्वी के चारो ओर 3mm मोटी परत बनेगी। वायुमंडल के वे क्षेत्र जहाँ ओजोन का संग्द्रव्य घट कर 100 डॉबसन मात्रक रह जाता है, ओजोन छिद्र कहलाते हैं।

इस छिद्र का कब पता लगा?

1960 के दशक के अंत में ऐन्टार्कटिका के ऊपर किए विभिन्न मापनों से पता चला कि ओजोन में कुछ कमी है। 1985 में इस विषय पर एक महत्वपूर्ण शोधपत्र प्रकाशित हुआ जिसमें कहा गया था कि ऐन्टार्कटिका के ऊपर वसंत ऋतु में ओजोन में कमी देखी गई है। NASA के 1986 के अध्ययन में भी ऐन्टार्कटिका के ऊपर ओजोन में कमी के संकेत मिले। 1986 और 1987 के मध्य प्रकाशित कई शोधपत्रों के अनुसार ओजोन में इस कमी का कारण मानव–जन्य प्रदूषण बताया गया।

यह छिद्र ऐन्टार्कटिका पर ही स्थित क्यों है?

ऐन्टार्कटिक में वसंत (सितंबर से दिसंबर प्रारंभ) में प्रबल पश्चिमी पवन इस महाद्वीप के चारों ओर चलनी प्रारंभ हो जाती हैं और एक वायुमंडलीय परिरोधक (Container)बनाती है। इस परिरोधक के निचले समताप मंडल की लगभग 50

प्रतिशत ओजोन, प्रत्येक वसंत ऋतु में नष्ट हो जाती है। प्रारंभ में वैज्ञानिक समुदाय चिंतित था कि यह कमी, कहीं विश्व के अन्य भागों में प्रकट न हो जाए। मापनों से पता चला कि (आर्कटिक) उत्तर ध्रुवीय क्षेत्र ऐसा है जहाँ वसंत में ओजोनपरत में उल्लेखनीय कमी देखने में आई। उत्तरध्रुवीय क्षेत्रों में सूर्य प्रकाश में सबसे अधिक विचरण होता है। शीत ऋतु में बहुत अधिक ठंड तथा अंधेरा होता है जिससे समताप मंडलीय बादलों का निर्माण होता है। अन्य स्थानों में समताप मंडल शुष्क होता है इस कारण वहाँ ये बादल नहीं बन पाते। ये बादल हिम क्रिस्टलों से बनते हैं, इस कारण कई अभिक्रियाओं के लिए पर्याप्त पृष्ठ उपलब्ध हो जाता है। इन बादलों के चारों ओर हानिप्रद रसायनों की उपस्थिति से ओजोन ह्रास त्वरित हो जाता है।

यहाँ यह भी उल्लेख करना समीचीन होगा कि ओजोन छिद्र के अतिरिक्त ऐसे अनेक क्षेत्र हो सकते हैं जहाँ ओजोन का सांद्रण, औसत मात्रा 300 डॉबसन से कम हों। ऐसे सभी क्षेत्रों में पराबैंगनी विकिरण का अबपात अधिक होगा जो जन स्वास्थ्य के लिए गंभीर संकट उत्पन्न कर सकता है।

ऐसे सभी उत्पादों को नियंत्रित करना असंभव है जिनसे CFC उत्पन्न होते हैं। हमारे समाज में अधिकांश मध्यवर्गीय परिवार में रेफ्रीजरेटर और एयरकंडीशनर अब आम बात हो गई है। परफ्यूम और बॉडी–स्प्रे का प्रचलन भी खूब हो रहा है। उद्योगों पर थोड़ा नियंत्रण किया जा सकता है परंतु प्लास्टिक आदि का उत्पादन, मांग पर निर्भर करता है जो लगातार बढ़ती जा रही है। हो सकता है उन्नत प्रौद्योगिकी अपनाकर हानिप्रद रसायनों पर कुछ काबू पाया जा सके, जो हमारे वैज्ञानिकों के लिए चुनौती होगी।

प्रकृति यथासंभव ओजोन और ऑक्सीजन में संतुलन बनाए रखने का प्रयास करती है। फिर भी हमें समय रहते सचेत रहने की आवश्यकता है।

○○○

2

गन्ने की बहुपेड़ी फसल के उत्पादन के लिए पेड़ी प्रबंधन एवं कार्बनिक खादों की उपयोगिता

आर.एस. सेंगर, मनोज कुमार शर्मा एवं रेशू चौधरी

गन्ना हमारे देश की प्रमुख नकदी फसल कही जाती है तथा यह ग्रामीण किसानों की जीविका का भी मुख्य स्रोत हैं। गन्ने की खेती व प्रसंस्करण द्वारा जहाँ करोड़ों लोगों को रोजगार मिलता है वहीं देश की प्रतिवर्ष पचास हजार करोड़ रुपए से भी अधिक रूपये का राजस्व प्राप्त होता है। यह देखा गया है कि गन्ने की खेती से किसानों की आर्थिक स्थिति में काँफी हद तक सुधार हुआ है। गन्ने की फसल काटने के बाद खेत में बचे ठूठों के भूमिगत भागों पर उपस्थित अंखुए उपयुक्त नमी व तापमान मिलने पर अंकुरित होने लगते हैं तथा पूर्ण पौधों में विकसित हो जाते हैं। इस तरह से विकसित हुई फसल को ही पेंड़ी फसल कहा जाता है। गन्ने की खेती में पेड़ी फसल अहम भूमिका निभाती है क्योंकि पेड़ी फसल लेने के लिए बीज व खेत की तैयारी में होने वाला खर्च बच जाता है तथा पेड़ी की फसल के अपेक्षाकृत जल्दी पकने के कारण किसानों को पेराई हेतु अधिक शर्करा देने वाली फसल प्राप्त हो जाती है। हमारे देश में पेड़ी फसल एक बार ही ली जाती है जबकि ऑस्ट्रेलिया तथा ब्राजील जैसे देशों में कम से कम 6–7 बार पेड़ी फसल की खेती की जाती है तथा अधिक लाभार्जन किया जाता है। हमारे देश में पेड़ी फसल पर कम ध्यान दिया जाता है जिससे बावक फसल की अपेक्षा कम लाभ प्राप्त होता है। यदि पेड़ी का रख–रखाव व प्रबंधन वैज्ञानिक तौर तरीकों से किया जाए तो उपज में वृद्धि करके किसान अधिक लाभ प्राप्त कर सकता है। यह सर्व–विदित है कि गन्ने की फसल अत्यधिक मात्रा में भूमि से पोषक तत्वों का अवशोषण करती है। एक अनुमान के अनुसार एक टन मिल योग्य गन्ना प्राप्त करने में प्रति हेक्टेयर खेत से 2.0 किग्रा. नाइट्रोजन, 0. 5 किग्रा. फॉस्फोरस, 2.8 किग्रा. पोटाश, 0.3 किग्रा. गंधक तथा 0.03 किग्रा. लोह तत्व का अवषोषण किया जाता है, जिसके चलते मिट्टी की उर्वरकता में उपयोगी तत्वों का दिन–प्रतिदिन ह्रास होता जा रहा है। मिट्टी की उर्वरकता बढ़ाने तथा पोषक तत्वों के ह्रास को कम करने के लिए वैज्ञानिकों ने

कार्बनिक खादों की सिफारिश की। वैज्ञानिक अध्ययनों के द्वारा यह सिद्ध हो चुका है कि गन्ने की खेती में कार्बनिक खादों के प्रयोग से जहाँ मृदा की उर्वरा शक्ति बनी रहती है वहीं कई पेड़ी फसल भी बिना उत्पादकता घटे प्राप्त की जा सकती हैं। कार्बनिक खादों के प्रयोग से सभी आवश्यक तत्व, पौधों को आसानी से प्राप्त हो जाते हैं। गन्ने में मुख्यतया प्रयोग होने वाली कार्बनिक खादें गोबर की खाद, मैली की खाद व जैव उर्वरक एसीटोबैक्टर का मिश्रण शामिल है। अध्ययनों से पता चलता है कि कार्बनिक खादों के प्रयोग से गन्ने में बहु–पेड़ी खेती उपज में बिना गिरावट के नही आती। पेड़ी गन्ने की अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए गोबर की खाद (10 टन/हे,) मैली खाद (10 टन/हे) अकेले अथवा जैव उर्वरकों (जैसे एसीटोबैक्टर) के साथ प्रयोग करना चाहिए। इन खादों के प्रयोग से कई पेड़ी फसलों तक अच्छी उपज प्राप्त की चुकी है। एक अन्य अध्ययन के अनुसार पता चला है कि रासायनिक उर्वरकों की तुलना में कार्बनिक खादों के प्रयोग से मृदा में एन्जाइमों की क्रियाशीलता में लगभग दो गुना तक वृद्धि पाई गई है तथा उत्पादन भी बढ़ा है। इससे सिद्ध है कि पेड़ी फसल पद्धति में कार्बनिक खादों का प्रयोग लाभप्रद है तथा यह फसल की बढ़वार व पैदावार बढ़ाने में भी सहायक है। अतः अब समय आ गया है कि गन्ने की खेती में मृदा व फसल दोनो के स्वास्थ्य को ध्यान में रखते हुए कार्बनिक खादों का प्रयोग करें तथा अधिक मुनाफा प्राप्त करें। गन्ने की खेती में कार्बनिक खादों का प्रयोग अकेले या जैव उर्वरकों के साथ बावक फसल की बुआई से पहले एवं प्रत्येक पेड़ी फसल को प्रारंभ करते समय करें। इसके लिए कार्बनिक खादों को मिट्टी में अच्छी तरह मिलाकर सिंचाई कर दें ताकि पौधों को पोषक तत्व शीघ्रातिशीघ्र प्राप्त हो सके। बहु पेड़ी पद्धति से गन्ने की खेती में होने वाला लाभ व लागत की गणनाओं से पता चलता है कि कार्बनिक खादों के प्रयोग से प्रति रुपया लागत पर मैली की खाद के साथ एसीटोबैक्टर के प्रयोग करने से बावक फसल से नौ पेड़ी फसलों तक अधिकतम लाभ प्राप्त हुआ है।

कार्बनिक खादों के प्रयोग से लंबे समय तक पोषक तत्वों की संतुलित मात्रा प्राप्त होती रहती है। जिससे आगामी पेड़ी फसलों की संख्या व बढ़वार रासायनिक उर्वरकों की तुलना में बेहतर होती है। मैली खाद या प्रेसमॅड गन्ने से चीनी मिलें अपने क्षेत्र में गन्ना उत्पादन में वृद्धि करा सकती हैं।

पेड़ी–प्रबंधनः– पेड़ी–प्रबंधन के लिए सर्वप्रथम आवश्यक है कि ऐसी जातियों का चयन किया जाए जिनमें पेड़ी क्षमता अच्छी हो। उत्तर भारत में मुख्य रूप से जल्दी पकने वाली जातियों के कोशा. 92254, कोशा. 95255, कोशा. 87263, कोशा. 8436, कोशा. 88230, कोशा. 96268 तथा मध्य व देर से पकने वाली जातियों में कोलक. 8102, कोशा. 91269, कोशा. 767, कोशा. 8432, कोशा. 97264, कोसे, 92423 तथा कोशा. 7918 प्रमुख हैं जो पेड़ी के लिए उत्तम जातियाँ मानी जाती हैं। अच्छी पेड़ी प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि बावक

फसल स्वस्थ व रोग मुक्त हों अतः बावक फसल में समय–समय पर रोगों की जाँच करते रहें तथा समय पर पानी व खाद की समुचित मात्रा देते रहें।

अच्छी पेड़ी प्राप्त करने के लिए बावक फसल की कटाई का उपयुक्त समय व विधिः–

नवंबर से जनवरी के मध्य काटे गए बावक गन्ने में तापमान कम होने के कारण फुटाव कम प्राप्त होता है, जिसके परिणाम स्वरूप पेड़ी अच्छी नहीं होती है। यदि फसल की कटाई देर से अप्रैल–मई में की जाती है तो भी पेड़ी अच्छी नहीं होती है। अतः उत्तम पेड़ी प्राप्त करने के लिए बावक फसल की कटाई फरवरी–मार्च में करनी चाहिए। अच्छी पेड़ी प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि बावक फसल की कटाई, भूमि की सतह से करें तथा ठूठों को खेत में न छोड़ें क्योंकि ये ठूठ आगामी फसल की वृद्धि में बाधक होते हैं। बावक फसल की कटाई समान रूप से करनी चाहिए। यदि बावक गन्ने पर मिट्टी चढ़ाई गई है तो मिट्टी गिराकर फसल काटनी चाहिए।

कर्षण क्रियाएंः– बावक फसल की कटाई के उपरांत कीटों व रोगों से बचाव हेतु खेते में बची सूखी पत्तियों व डंठलों को पूरे खेत में बिखेरकर जला देना चाहिए तथा सिंचाई कर देनी चाहिए। फुटाव में एकरूपता लाने के लिए पर्याप्त नमी स्तर पर किसी तेज धार वाली औजार या स्टबल शेवर से छंटाई कर देनी चाहिए तथा खाद डाल देना चाहिए। खेत में रिक्त स्थानों की पूर्ति अंकुरित गन्ने के टुकड़ों से कर देनी चाहिए।

उर्वरकों की मात्रा एवं प्रयोगः– अच्छी पेड़ी फसल के लिए प्रारंभिक अवस्था में नाइट्रोजन की अधिक मात्रा प्रति आवश्यक होती है। इसलिए मेंड़ें गिराते समय 90 किग्रा./हे0 नाइट्रोजन तथा फॉस्फोरस व पोटाश की संपूर्ण मात्रा मेंड़ के दोनों ओर नालियों तथा शेष (90 किग्रा./हे0) नाइट्रोजन मई माह में वर्षा पूर्व उचित नमी में दो बार टॉप ड्रेसिंग के रूप में देनी चाहिए।

सिंचाई व पताई बिछानाः– पेड़ी फसल की सिंचाई 10–15 दिनों के अंतराल पर करनी चाहिए। गन्ना पेड़ी की दो पंक्तियों के बीच में 5–7 सेमी. मोटी पत्तियों की तह बिछाने से नमी संचित रहती है तथा मृदा का कार्बनिक स्तर भी बढ़ता है। सूखी पत्तियाँ बिछाने के बाद फेनवेलरेट कीटनाशीय दवा का छिड़काव 5% धूल फी 25 किग्रा./हे0 की दर से कर देना चाहिए।

मिट्टी चढ़ाना व बंधाईः– पेड़ी में अवांछित कल्लों के प्रस्फुटन को रोकने के लिए वर्षा से पूर्व मिट्टी चढ़ाना आवश्यक होता है तथा गन्ने को गिरने से बचाने के लिए वर्षा ऋतु में गन्ने की बंधाई कर देनी चाहिए क्योंकि गन्ना गिरने से उसमें शर्करा की मात्रा घट जाती है। गन्ने की पहली बंधाई जुलाई तथा दूसरी अगस्त या सितंबर में करनी चाहिए।

फसल सुरक्षाः– वर्षा से पूर्व गन्ने में तेजी से काला चिकटा कीट का प्रकोप होता है जिससे पौधे पीले पड़ जाते हैं। इसकी रोकथाम करने के लिए 1.0 किग्रा. इंडोसल्फान की मात्रा तथा 10 किग्रा.

यूरिया को 1000–1200 लिटर पानी में घोल कर पत्तियों के बीच गोफ में डाल देना चाहिए। शीतकाल की पेड़ी के साथ बरसीम की अंतः फसली खेती करने से कलिया ठंड के प्रकोप से बच जाती हैं।

पेड़ी के लाभः–

1. गन्ना के पेड़ी में खेत की तैयारी, बीज की बचत तथा फसल सुरक्षा व्यय में कटौती होने के कारण बावक फसल की अपेक्षा फसल उत्पादन का खर्च 30–40 प्रतिशत कम आता है।

2. गन्ने की पेड़ी 4–5 सप्ताह पूर्व पककर तैयार हो जाती है जिससे चीनी मिलें जल्दी शुरू की जा सकती हैं तथा किसान को बाजार में गन्ने का उचित मूल्य प्राप्त हो जाता है।

3. पेड़ी फसल के जल्दी कट जाने से खेत दूसरी फसल बोने के लिए खाली हो जाती है।

4. पेड़ी गन्ने से उचित फसल प्रबंधन द्वारा प्रति हेक्टर अधिक उत्पादन व लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

चित्र (गन्ने की बहुपेड़ी फसल में कार्बनिक खाद का प्रयोग)

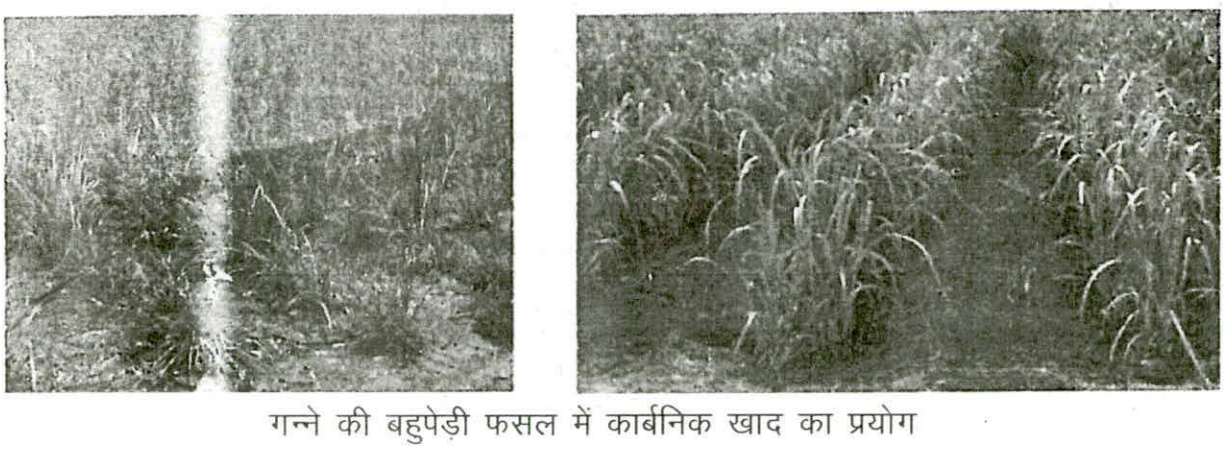

गन्ने की बहुपेड़ी फसल में कार्बनिक खाद का प्रयोग

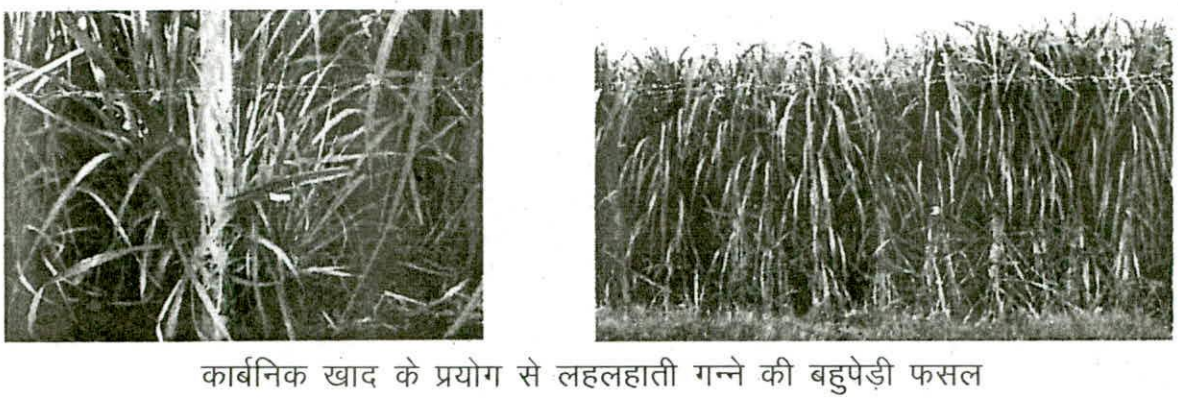

कार्बनिक खाद के प्रयोग से लहलहाती गन्ने की बहुपेड़ी फसल

○○○

3

जलवायु परिवर्तन के परिप्रेक्ष्य में संधारणीय परिवहन का विकल्प

संजय चौधरी एवं डॉ. नित्यानंद चौधरी

प्रस्तावना

जलवायु परिवर्तन का मुद्दा आजकल पूरे विश्व में गर्माया हुआ है। यह जलवायु में हो रहा परिवर्तन ही है, जिसकी वजह से असमय बारिश, जरूरत से ज्यादा गर्मी और कड़ाके की ठंड अपना कहर बरपाने के लिए कभी वैश्विक तापन भी आ जाता है। ग्लोबल वॉर्मिंग अथवा जलवायु परिवर्तन आज एक बड़ी समस्या बन गया है। यह सत्य है कि आवागमन मनुष्य की एक बुनियादी आवश्यकता है जिसके अंतर्गत आज परिवहन के विभिन्न साधन उपलब्ध हैं परन्तु यह भी सत्य है कि यातायात एवं परिवहन के इन आधुनिक साधनों ने पर्यावरण के संतुलन पर प्रतिकूल प्रभाव डाला है।

जलवायु परिवर्तन के ज्वलंत मुद्दे ने परिवहन क्षेत्र के साथ–साथ अन्य सभी क्षेत्रों में तमाम सुधारों को लागू करने एवं पर्यर–हितैषी उपायों को अपनाने की आवश्यकता के प्रति पूरे विश्व में जागरूकता बढ़ी है। हालांकि परिवहन के क्षेत्र में हरित उपायों के कार्यान्वयन तथा शून्य उत्सर्जन वाले साधनों की खोज, नई क्रांति के रूप में उभर कर आ रही है, लेकिन अभी काफी कुछ किया जाना शेष है। इस लेख में परिवहन क्षेत्र एवं विशेष रूप से सड़क परिवहन को देखते हुए सड़क यातायात की विभिन्न समस्याओं तथा सुचारू, आवागमन के लिए संधारणीय परिवहन (सस्टेनेबल ट्रासपोर्ट) पर चर्चा की गई है।

परिवहन का क्षेत्र और जलवायु परिवर्तन

परिवहन के अधिकांश वर्तमान साधन मुख्य रूप से अनवीकरणीय (नॉन रिन्यूएबल) जीवाश्म ईंधन की खपत करते हैं और ग्रीन हाउस गैसों, ठोस निलंबित कणों (एसपीएम), गैर मेथेन हाइड्रोकार्बन आदि दूषित तत्वों का उत्सर्जन करते हैं। ये सभी दूषित तत्व अपनी रासायनिक संरचनाओं, गुणधर्मों, पर्यावरण स्थायित्व और अपने दीर्घावधि प्रभाव में भिन्न–भिन्न प्रकार के होते है। परिवहन क्षेत्र द्वारा उत्पन्न दूषित तत्वों एवं हानिकारक गैसों के कारण

पर्यावरण से संबंधित अनेक प्रकार की समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं जिनका स्वरूप विश्व–व्यापी है। इन भूमंडलीय समस्याओं के अंतर्गत भूमंडलीय तापन जलवायु परिवर्तन और ग्रीन हाउस प्रभाव इत्यादि समस्याएं सम्मिलित हैं।

पूरे विश्व में आज जलवायु–परिवर्तन की समस्या सबसे गंभीर होती जा रही है। तापक्रम और आर्द्रता के स्तर में मामूली परिवर्तन का पूरे परिवहन–क्षेत्र पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। अंतरराष्ट्रीय परिवहन फोरम (इंटरनेशनल ट्रांसपोर्ट फ़ोरम) की अनुसंधान रिपोर्ट 'परिवहन और ऊर्जाः जलवायु परिवर्तन की चुनौती' में इन आंकड़ों की जानकारी दी गई हैं:

मनुष्य जाति द्वारा उत्पन्न ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जनों का 13% उत्सर्जन परिवहन क्षेत्र द्वारा किया जाता है और जीवाश्म ईंधन के दहन से उत्पन्न दुनिया भर के कार्बनहाइऑक्साइड के उत्सर्जन के 23% के लिए यह क्षेत्र जिम्मेदार है। इस उत्सर्जन के अगले 40 साल में दोगुना होने का अनुमान है।

• दुनिया में कार्बनडाइऑक्साइड के कुल उत्सर्जन का आधा हिस्सा कारों द्वारा होता है तथा दुनिया भर में वर्ष 2000 और 2050 के बीच कारों की संख्या तीन गुनी होने की उम्मीद है।

• वर्ष 2005 की तुलना में 2025 में हवाई यातायात में 2.5 गुना वृद्धि होने तथा हवाई मालवाहक यातायात में 3 गुना वृद्धि होने की उम्मीद है।

• दुनिया भर में कार्बनडाइऑक्साइड के उत्सर्जन की दृष्टि से परिवहन क्षेत्र के अंतर्गत सड़क परिवहन सर्वाधिक उत्सर्जन करता है तथा जहाजरानी और विमानन में अधिक तेजी से वृद्धि होने के बावजूद आने वाले दशकों में समान स्थिति बनी रहेगी।

सड़क परिवहन का सामान्य परिदृश्य

पूरी दुनिया में वाहनों की बढ़ती संख्या एक बहुत बड़ी समस्या बन चुकी है। लेकिन भारत और चीन जैसे सर्वाधिक जनसंख्या वाले देशों की स्थिति पूरी दुनिया में सबसे ज्यादा खराब है। इन देशों की सड़कों पर यातायात जाम होना एक आम समस्या बन चुकी है। बीजिंग और शंघाई जैसे चीन के प्रमुख शहरों में सड़कों पर गाड़ियों का जाम आम नागरिकों के लिए सिरदर्द बनता जा रहा है। भारत के लोग भी सड़क यातायात की विभिन्न समस्याओं के कम त्रस्त नहीं हैं। भारतीय महानगरों में सड़क यातायात की अव्यवस्था के कारण आर्थिक नुकसान के संबंध में अनेक सर्वेक्षण किए गए हैं। दिल्ली ऐन्द एनसीआर कम्यूटर्स मैन ऑवर लॉसेज़ नामक सर्वेक्षण से यह बात सामने आई है कि यातायात जाम के कारण दिल्ली और राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में कार्यरत लोगों के 42 करोड़ उत्पादक घंटे यूं ही बरबाद हो जाते हैं।

पिछले दिनों संपन्न एक अध्ययन के परिणामों से पता चलता है कि दिल्ली में दफ्तर आने–जाने वाले कामकाजी लोग 30 वर्ष के अपनी औसत सेवा–काल के दौरान अपने जीवन का लगभग 6 वर्ष सड़कों पर यातायात जाम में फंसे हुए बिता देते हैं। यह स्थिति तो वर्तमान की है, लेकिन जब भविष्य में निजी वाहनों की बहुत बड़ी फौज सड़कों को रौंदने के लिए तैयार होगी तो स्पष्ट है कि आम

आदमी के लिए परेशानियाँ भी कई गुना बढ़ जाएंगी। इस संबंध में संपन्न विभिन्न अध्ययनों से स्पष्ट हो जाता है कि भारत सहित कुछ विकासशील देशों में वाहनों की बढ़ोतरी की दर, अविश्वसनीय रूप से काफी तेज है। एक ब्रिक (बीआरआईसी) रिपोर्ट बताती है कि वाहनों की अनियंत्रित वृद्धि के कारण वर्ष 2050 तक भारत पूरी दुनिया में सबसे अधिक वाहनों वाला देश हो जाएगा।

भारत में सड़कों की अव्यवस्था एवं यातायात–संबंधी विभिन्न समस्याओं में वृद्धि के कारण समाधान की खोज के प्रयास भी तेज हुए हैं। अधिकतर परिवहन विशेषज्ञों के अनुसार आज आवश्यकता इस बात की है कि शहरों को मानव के रहने लायक बनाया जाए। कंक्रीट और बिटुमेन में परिवर्तित होते शहरों के स्वरूप पर लगातार चर्चाएं हो रही हैं। सड़क यातायात के अंतर्गत कारों की अनवरत वृद्धि पर रोक लगाना बहुत जरूरी है ताकि सड़क यातायात से उत्पन्न प्रदूषण और यातायात से संबंधित विभिन्न समस्याओं पर अंकुश लगाया जा सके। संबंधित समस्याओं के समाधान की दृष्टि से हरित परिवहन की संकल्पना पर आधारित परिवहन–व्यवस्था के विकल्प को अत्यंत महत्वपूर्ण माना जा रहा है।

सड़क परिवहन से संबंधित समस्याएं

सड़क यातायात से उत्पन्न प्रदूषण और यातायात से संबंधित विभिन्न समस्याओं के लिए सड़कों का कम होना तथा वाहनों का तेजी से बढ़ना प्रमुख कारण माने जाते हैं लेकिन गहराई से देखें तो ये दोनों बातें परस्पर संबद्ध हैं। अधिकांश शहरों में निजी वाहनों की संख्या में हो रही असामान्य वृद्धि के कारण ही सड़कों के अंतर्गत आने वाला क्षेत्र कम लगने लगा है। भारतीय शहरों में सड़कों का उपयोग न केवल यातायात के आवागमन के लिए बल्कि वाहनों को खड़ा करने (पार्किंग) के लिए तथा रेहड़ी–खोमचेवालों के द्वारा अनधिकृत रूप से भी किया जाता है।

शहरों में जनसंख्या बढ़ने के साथ ही यात्रा दर में भी वृद्धि हुई है। लेकिन व्यक्ति की आवश्यकता के अनुरूप परिवहन व्यवस्था उपलब्ध न होने के कारण निजी वाहनों की भरमार हो गई है जिससे सड़क व्यवस्था पर अनावश्यक एवं अनियंत्रित बोझ पड़ रहा है। आंकड़े बताते हैं कि दिल्ली में लगभग 86 लाख गाड़ियाँ हैं जो न्यूयॉर्क और लॉस एंजिलिस जैसे शहरों से भी ज़्यादा है। दिल्ली में साल 2000 से 2015 तक 97% गाड़ियाँ बढ़ गई हैं। विशेषज्ञों के अनुसार देश में ऐसे 10–12 शहर हैं जहाँ गाड़ियों से होने वाले प्रदूषण की मात्रा काफी ज्यादा है। सर्वोच्च न्यायालय ने भी यातायात प्रदूषण के संबंध में कई बार तल्ख टिप्पणी की है।

सड़क पर की जाने वाली यात्रा जरूरी होने क बावजूद शहरों में अधिकांश लोग मानने लगे हैं कि सड़क पर चलना परेशानी से भरा तथा समय और पैसे की बर्बादी करने वाला होता जा रहा है। विश्व बैंक द्वारा प्रायोजित दिल्ली शहरी पर्यावरण तथा अवसंरचना सुधार परियोजना की रिपोर्ट में भी यह स्वीकार किया गया है कि "दिल्ली में उपलब्ध जन परिवहन व्यवस्था गुणवत्ता, मात्रा तथा सम्मिलित

क्षेत्रों की दृष्टि से अत्यंत अपर्याप्त तथा बढ़ती हुई यात्रा मांग को पूरा करने में असमर्थ रही है।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में जन परिवहन व्यवस्था के नाम पर दिल्ली अब मेट्रो रेल उपलब्ध है। मेट्रो रेल जन–परिवहन के लोकप्रिय साधन के रूप में ज़रूर अपनी सेवा दे रही है। लेकिन सामान्यतः घर अथवा कार्य स्थान से मेट्रो स्टेशनों का अधिक दूरी होने तथा इस सेवा के कुछ क्षेत्रों तक सीमित होने के कारण समाज के कई वर्गों के लिए इसकी उपयोगिता अपेक्षित स्तर तक नहीं पहुँच सकी है। दूसरी ओर निजी वाहन रखने की बढ़ती प्रवृत्ति के कारण अधिकांश भारतीय शहरों की तरह दिल्ली के लोग भी सड़क आधारित परिवहन–व्यवस्था पर निर्भर हैं।

संधारणीय परिवहन

सड़क यातायात के क्षेत्र में जटिलता के दृष्टिगत लोगों को बोध–युक्त परिवहन और संधारणीय परिवहन जैसी नवीन संकल्पनाओ की ओर आकर्षित किया है। ईंधन की हानि, वाहनीय प्रदूषण, यातायात जाम, सड़क दुर्घटनाएं वाहन–चालकों के हिंसक झगड़े स्वास्थ्य पर पड़ने वाला प्रतिकूल प्रभाव एवं समय की बरबादी को रोकने के लिए हरित एवं प्रदूषण–मुक्त उपायों के प्रति लोगों की रुचि बढ रही है जो जलवायु परिवर्तन को रोकने में भी सहायक होंगे। परिवहन के अधिकांश वर्तमान साधनों में प्रयुक्त जीवाश्म ईंधन, ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन और वायु प्रदूषण ही पर्यावरण व जलवायु को प्रभावित करते हैं। ऐसे में परिवहन के सामाजिक तालमेल को प्रोत्साहित कर और पर्यावरणीय सुरक्षा जैसे अन्य संबंधित लाभों को उत्पन्न कर सामाजिक आयामों को सकारात्मक स्वरूप दिया जा सकता है।

संधारणीय परिवहन को पूरे विश्व में आज बड़े स्तर पर स्वीकार किया जा रहा है। भारत ने इस दिशा में कुछ सार्थक कदम उठाए हैं। 'नेशनल जियोग्राफिक सोसाइटी ऐन्ड ग्लोबस्कैन' के वार्षिक 2010 सर्वेक्षण से भी इसकी पुष्टि होती है। सर्वेक्षण के नतीजे बताते हैं कि भारतीय लोग परिवहन के क्षेत्र में पर्यावरणीय दृष्टिकोण एवं संधारणीय परिवहन को काफी महत्व देते हैं। ईंधन की बचत एवं प्रदूषण निवारण को बढ़ावा देने तथा संधारणीय परिवहन को व्यावहारिक रूप से लागू करने की दिशा में भारतीय काफी आगे हैं।

जलवायु परिवर्तन से संबंधित जटिल समस्याओं के निदान के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि संधारणीय परिवहन की संकल्पना को ठीक प्रकार से समझा जाए। विकीपीडिया के अनुसार सतत विकास की अवधारणा से संधारणीय परिवहन की संकल्पना ने जन्म लिया। संधारणीय परिवहन एक सतत गतिशील परिवहन प्रणाली है। यह परिवहन साधन का एक ऐसा विकल्प प्रदान करता है जो व्यक्तियों, कंपनियों और समाज हो। इसके अनुसार परिवहन साधन सस्ता हो तथा उसका प्रचालन कुशल एवं प्रभावी ढंग से किया जाए। समग्र रूप से प्रतिस्पर्धी अर्थव्यवस्था के साथ–साथ यह संतुलित क्षेत्रीय विकास का समर्थन करता है।

संधारणीय परिवहन का लक्ष्य है कि हमारी परिवहन पद्धति ऐसी हो जो समाज की आर्थिक, सामाजिक और पर्यावरणीय आवश्यकताओं को

पूरा करे लेकिन अर्थव्यवस्था, समाज और पर्यावरण पर इनके अवांछित प्रभावों को न्यूनतम स्तर पर रखे। सड़क यातायात के संदर्भ में सड़कों पर लगने वाला जाम राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को नुकसान पहुँचाने वाला एक बहुत बड़ा कारक है। इसे रोकने के लिए बेहतर लेन अनुशासन और यातायात नियमों के पालन के प्रति लोगों को जागरूक बनाना जरूरी है। ऐसा करने से एक ओर सड़क सुरक्षा को बढ़ावा मिलेगा तथा दूसरी ओर सड़क यातायात से संबंधित आर्थिक–सामाजिक नुकसान और पर्यावरणीय दुष्प्रभावों को नियंत्रित करना संभव हो सकेगा।

भारतीय महानगरों में जनसंख्या के दबाव के कारण परिवहन साधनों की माँग लगातार बढ़ रही है लेकिन सार्वजनिक परिवहन सेवा को बढ़ाने के लिए अपेक्षित प्रयास नहीं किए गए हैं जबकि सड़क यातायात के क्षेत्र में बढ़ती समस्याओं को देखते हुए ऐसा करना ज़रूरी हो चुका है। इस समस्या के समाधान हेतु यह आवश्यक है कि सड़क यातायात को मेट्रो रेल के पूरक के रूप में विकसित किया जाए। अभी तक दिल्ली और अधिकांश महानगरों में सड़क यातायात प्रमुख है जबकि स्थानीय रेल सेवा अथवा मेट्रो सेवा इसके पूरक के रूप में काम करती है।

इस संदर्भ में यह जानना ज़रूरी है कि सड़क यातायात और परिवहन क्षेत्र से जुड़े विशेषज्ञ इस समस्या का क्या समाधान बताते हैं। बौद्धिक परिवहन और संधारणीय परिवहन के क्षेत्र में कार्यरत अधिकांश विशेषज्ञों का यह स्पष्ट विचार है कि शहरी सीमा के अंदर लंबी यात्रा के लिए स्थानीय रेल अथवा मेट्रो का उपयोग अधिक सार्थक सिद्ध हो सकता है जबकि कम दूरी के लिए सार्वजनिक परिवहन सेवा का उपयोग अधिक उपयोगी रहेगा लेकिन यह भी एक सच्चाई है कि अधिकांश भारतीय शहरों में सार्वजनिक परिवहन–सेवा की व्यवस्था संतोषजनक नहीं है।

चित्र. संधारणीय परिवहन का एक दृश्य

यहाँ 11 वीं मेट्रोपोलिस वर्ल्ड कांग्रेस –2014 के समापन समारोह में भारत के राष्ट्रपति श्री प्रणव मुखर्जी द्वारा व्यक्त किए गए विचारों का उल्लेख करना प्रासंगिक होगा। हैदराबाद, तेलंगाना में 09.10.2014 को दिए अपने अभिभाषण में माननीय राष्ट्रपति ने कहा था, 'परंपरागत रूप से, भारत में नगरपालिकाएं शहरी परिवहन को अपना प्रमुख कामकाज नहीं मानती हैं; परंतु अब यह महसूस किया जा रहा है कि हर शहर को यह सोचना और प्रयास करना होगा कि उसके लोग एक स्थान से दूसरे स्थान तक कैसे जाएंगे। आवागमन और परिवहन नियंत्रण का नहीं बल्कि विकास का मुद्दा हैं। शहरों को अपनी आबादी की अपनी पहली पसंद के रूप में, जन सुविधा प्रणालियों का प्रयोग करने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए।'

सार्वजनिक परिवहन सेवा को जनता की अपेक्षाओं के अनुरूप बनाने के लिए सर्वप्रथम यह आवश्यक है कि इसके अंतर्गत हर वर्ग की आवश्यकताओं के अनुसार सुविधाएँ उपलब्ध कराने की ओर ध्यान दिया जाए। सार्वजनिक परिवहन सेवा को सुधारने के लिए व्यवस्थागत परिवर्तनों पर

अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। यह सेवा द्रुत और नियमित हो तथा व्यस्त मार्गों पर यात्रियों के लिए अधिक नियमित फेरों की सुविधा उपलब्ध कराती हो। सार्वजनिक परिवहन सेवा में उच्च क्षमता की बसों को शामिल करके तथा जीपीएस जैसी आधुनिक तकनीक के प्रयोग के इस सेवा को अधिक कार्य–कुशल एवं उपयोगी बनाया जा सकता है।

जलवायु परिवर्तन के परिप्रेक्ष्य में उत्पन्न वैश्विक चिंता को देखते हुए भारत सरकार ने ठोस कार्रवाई की दिशा में कार्य आरंभ कर दिया है। संधारणीय परिवहन को बढ़ावा देने के लिए सरकार ऐसे उपाय करने जा रही है कि वर्ष 2030 तक भारत की 40 प्रतिशत स्थापित ऊर्जा की क्षमता गैर–जीवाश्म ईंधन पर आधारित होगी। वर्ष 2022 तक 175 गिगावट नवीकरणीय ऊर्जा उत्पादन करने का भारत का लक्ष्य है। देश में 50 नई मेट्रो रेल परियोजनाएँ स्थापित की जाएंगी, ताकि लोग निजी वाहन छोड़कर सार्वजनिक वाहनों का प्रयोग ज्यादा करें। इसी प्रकार, सरकार द्वारा कोयले पर कर लगाया गया है और पेट्रोलियम उत्पादों पर सहायिकी (सबसिड़ी) कम की गई हैं ताकि लोग बस, ट्रेन, मेट्रो की ओर अधिक आकर्षित हों।

आजादी के बाद यह पहला मौका है जब सरकार 101 राष्ट्रीय जलमार्गों की योजना को कार्यान्वित करने की दिशा में आगे बढ़ रही है ताकि सड़कों पर यातायात में कमी लाई जा सके। सरकार अगले पाँच वर्षों में जलमार्गों के विकास पर 50 हजार करोड़ रुपये की राशि खर्च करके एक मजबूत ढांचा खड़ा करने की तैयारी में है। केंद्र सरकार की योजना है कि आगामी एक दशक में जल–परिवहन के क्षेत्र में, निजी क्षेत्रों को आगे करते हुए पाँच लाख करोड़ रुपये तक का निवेश किया जाए। भारत सरकार एक एकीकृत राष्ट्रीय जलमार्ग परिवहन ग्रिड की स्थापना की दिशा में भी आगे बढ़ रही है। इसके तहत 4503 किमी जलमार्गों के विकास की योजना है। इस परियोजना के पूरा होने पर सड़क तथा रेल से काफी माल का परिवहन अंतर्देशीय जलमार्गों की ओर मोड़ने में सफलता मिल सकेगी। सड़क परिवहन, राजमार्ग और जहाजरानी मंत्रालय दिशा में नई सरकार बनने के बाद से ही सक्रिय है।

निष्कर्ष

प्रकृति–सम्मत साधनों के प्रयोग तथा पर्यावरण–संरक्षण की दिशा में हमारा देश सदैव अग्रणी रहा है। वर्तमान समय में भी भारत सरकार जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभावों को कम करने के लिए परिवहन के क्षेत्र में सुधार लाने का प्रयास कर रही है। पर्यावरणीय स्थिरता के लिए पैदल चलने, ई–रिक्शा तथा साइकिल जैसे मोटर–रहित परिवहन माध्यमों को प्रोत्साहन देना अधिक प्रभावकारी उपाय हैं। स्पष्ट है कि ऊर्जा–दक्ष हरित संधारणीय परिवहन का विकल्प जनता की आकांक्षाओं को पूरा करने के साथ–साथ जलवायु परिवर्तन की चुनौती का सामना करने में भी अत्यंत सहायक सिद्ध होगा।

संदर्भ

1. Climate Change and Sustainable Transport – www.unece.org

2. Sustainable Urban Transportn in India, Akshay Mani, Madhav Pai and Rishi Aggarwal, 2012

3. SUTP Selects Detailed Project Report for water Transport, The New Indian Express, 29 September 2015

4. Intelligent Traffic Sysytem Mooted, Deccan Chronicle, 27 May 2013

5. जलवायु परिवर्तनः वैश्विक भागीदारी और जिम्मेदारी, प्रणव पुरषोत्तम, 11 दिसंबर 2015, http://zeenews.india.com

6. What Substainable Road Transport Future? Stef Proost, Kurt van Dender, Joint Transport Research Centre Discussion Paper no. 14 (2010)

7. http:// presidentofindia. nic.in/ speeches–detail –hi.htm

○○○

4

लाख की खेती में जैव–प्रौद्योगिकीः एक नया विकल्प

डा. विनय कुमार मिश्रा, डा. तमिलरसी के.एवं डा. के.के. शर्मा

प्रस्तावना

लाख की खेती का अर्थ लाख के कीटों का अपने पोषक पौधों पर लालन पोषण है। सामान्यतः भारत में जिस लाख की खेती की जाती है उसका वैज्ञानिक नाम **केरिया याका** है। इसके कीट केवल अपने निश्चित पोषक वृक्षों पर ही विकसित होते है। भारत में लाख कीट हेतु उपलब्ध पौधे कुसुम, पलास तथा बेर है। लाख की खेती विभिन्न कारको से प्रभावित होती है, तथा ये कारक लाख उत्पादन के लिए हानिकारक होते हैं। इन समस्याओ से निपटने के लिए विभिन्न वैज्ञानिक उपाय हैं। इन्ही उपायों में से एक है जैव प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल जैव प्रौद्योगिकी का अर्थ किसी उत्पाद को बनाने या विकसित करने के लिए जैव प्रणाली या जीव का प्रयोग करना अथवा किसी भी ऐसे तकनीक को अपनाना जिसमें उत्पाद अथवा विशिष्ट प्रक्रिया को बनाने या संशोधित करने हेतु जीवों या उनके व्युत्पन्नों का उपयोग किया जाए। किसी भी जीव में जीन का प्रत्यारोपण या मौजूद जीन को निष्क्रिय करना जैव प्रौद्योगिकी का मूल आधार है। आज कल फसलों में जीन प्रत्यारोपण द्वारा ऐसी किस्मों का विकास किया जा रहा है जो कई अर्थों से क्रांतिकारी कही जाती है। विश्व की बढ़ती समस्याओं को हल करने के लिए जैव प्रौद्योगिकी को भविष्य की समर्थ तकनीक के रूप में देखा जा रहा है।

जैव प्रौद्योगिकी के उद्देश्य

1. कम लागत में प्रति इकाई भूमि क्षेत्रफल अधिक उत्पादन प्राप्त करना।

2. फसलों में रोगाणुओं के प्रति सहयता, पोषक तत्वों का उन्नयन तथा कीट एवं रोग–रोधी गुणों को समावेशित करना।

3. पादप–प्रजनन में प्रयुक्त होने वाली प्रारंभिक तकनीकों को उन्नत कर खाद्य उत्पादन को वांछित स्तर तक पहुँचाना।

4. जीवों का पृथकन तथा विशिष्ट जीन की पहचान द्वारा पारजीवी (ट्रान्सजंनिक) पौधों का विकास करना।

5. फसलों की आनुवंशिक क्षमता को सुदृढ़ करने का प्रयास करना।

जैव प्रौद्योगिकी की भूमिका

1. फसलों की नवीनतम किस्मों का विकास करना।

2. पशुओं की उन्नत नस्लों का विकास एवं रोग–नियंत्रण करना।

3. जैव प्रौद्योगिकी का उपयोग कृषि एवं बागवानी फसलों की नई जातियों के विकास में अहम भूमिका निभा सकता है। चूँकि परंपरागत प्रजनन विधियों से आधुनिक फसलों मे नई जाति विकसित करने के लिए अधिक समय लगता है। अतः इस तकनीक द्वारा इन फसलों की नई जातियों को कम समय में विकसित किया जा सकता है।

लाख की खेती हेतु विभिन्न साधन जिनका हेतु जैवप्रौद्योगिकी का उपयोग किया जा सकता है, निम्नलिखित हैं :

1. बेहतर उपज हेतु पोषक वृक्षों की पहचान एवं अधिक गुणन।

2. जैविक एचं अजैविक समस्याओं के प्रति सहयता हेतु पारंजीवी ट्रांसजीनीक पौधे।

3. परजीवी, परभक्षी एवं अन्य शत्रु जीवों की आण्विक जाँच।

4. उन्नत लक्षणों हेतु आनुवंशिक रूप से संशोधित कीट।

5. लाख राल एवं रंजक का पात्रे (इन विट्रो) उत्पादन।

6. बेहतर उपज हेतु पोषक वृक्षों की पहचान एवं अधिक गुणन।

साधारणतया लाख कीट के पोषक कुसुम, पलास एवं बेर बहुवर्षी पौधों की भी प्रजातियाँ समान लाख उत्पादन नहीं करती। कुछ जातियाँ कम लाख उत्पादन देती है। डी. एन. ए. आधारित आण्विक चिह्नक विकसित कर अधिक लाख उत्पादन करने वाली जातियों की पहचान की जा सकती है। इन चिह्नित अधिक उत्पादन देने वाल्व पौधों को वानस्पतिक विधि द्वारा उत्पादित कर उसी तरह के पौधे बनाकर किसानों में वितरित कर उत्पादकता बढ़ाई जा सकती है। अधिक लाख उत्पादन देने वाले पौधों का अधिक गुणन, प्रयोगशाला में कीटाणुनाशक वातावरण में किया जा सकता है। ऊतक संवर्धन द्वारा कम समय तथा कम जगह में अधिक संख्या में पौधे तैयार किए जा सकते है।

2. जैविक एवं अजैविक तनाव सह्यता हेतु पारजीनी (ट्रांसजेनिक) पौधे

लाख के पोषक पौधे अक्सर कई कीटों और रोगों से प्रभावित होते है। इन जैविक कारकों के अलावा कई अजैविक कारक तथा शुष्क लवणता जल भराव, तापमान आदि भी लाख पोषक पौधों को प्रभावित करते है। जैव प्रद्योगिकी की सहायता से पारजीवी पौधे पैदा किए जा सकते है, जो जैविक और अजैविक दोनों तरह के तनाव को सहन कर सकते हैं। उदाहरण के लिये प्लेमिन्जिया

सेमियालता एक झाडीदार लाख–पोषक पौधा इन दिनों तेजी से आ रहा है, हालांकि यह एक शुष्क सुग्राही फसल है तथा बिना सिंचाई के ग्रीष्मकालीन फसल की तरह इसका इस्तेमाल नहीं किया जा सकता।

किसी अन्य जीव से शुष्क सहिष्णु जीन, फ्लेमेंजिया में संचारित कर उसे शुष्क सहिष्णु ट्रान्सजेनिक पौधा फसल की तरह बिना सिंचाई के भी इस्तेमाल किये जा सकते है। चिह्नक (मार्कर) की सहायता से आण्विक प्रजनन तकनीक का उपयोग शुष्क सहिष्णु, कीटो एवं रोग प्रतिरोधी जैसे इच्छित लक्षणों वाले पौधे विकसित करने में किया जा सकता है।

3. लाख कीट के परभक्षी एवं अन्य शत्रुओं की आण्विक जाँच–

लाख फसल की सुरक्षा के लिए जरूरी है कि प्रकोप को शुरुआत में ही पहचान लिया जाय। लाख फसल की अपरिपक्व अवस्था में परभक्षी का पता लगाना एवं पहचान करना बहुत कठिन है। अतः आण्विक जीव विज्ञान विधि ही लाख की फसल में परभक्षी का पता लगाने में मद्दगार होगी। सिर्फ परभक्षी प्रकोपी ही नहीं अन्य जीवाणु बैक्टीरिया कवक, विषाणु आदि जो लाख कीट में रोग उपज करने में जिम्मेदार होते है, उन्हें भी जैवप्रौद्योगिकी उपकरणों द्वारा पहचाना जा सकता है। बहुलक श्रृंखला अभिक्रिया (पी.सी.आर.) तकनीक में लाख कीट के डी.एन.ए. की बहुत कम मात्रा हानिकारक जैविक घटकों को पहचानने के लिए आवश्यक होती है।

4. उन्नत लक्षणों हेतु आनुवांशिक रूप से संशोधित कीट–

जैविक कारक जैसे परजीवी एवं परभक्षी तथा अजैविक कारक जैसे उच्च तापमान लाख की खेती को प्रतिकूलतः प्रभावित करते है। जैव प्रौद्योगिकी के अविष्कार से परजीवी एवं परभक्षी लाख कीटों को विकसित करना संभव हो पाया है। इसी तरह तापमान सहिष्णु लाख कीटो का विकास भी संभव है। लाख कीटों में गुणवत्ता एवं उत्पादकता के लक्षणों के लिए चिह्नक का विकास आण्विक तकनीक द्वारा किया जा सकता है। परिणामस्वरूप, उच्च उत्पादकता एवं अच्छी गुणवत्ता वाले लाख कीट उत्पन्न किए जा सकते है।

5. लाख राल एवं रंजक का प्रयोगशाला में पात्रे (इन विट्रो) उत्पादन–

किसी भी जैव से जीन अलग करने हेतु आण्विक जीव विज्ञान में विभिन्न तकनीकें उपलब्ध है। इन तकनीकों का प्रयोग सल एवं रंजक संश्लेषण के लिए जिम्मेदार जीन को लाख कीटों से अलग करने में किया जाता है। एक बार महत्वपूर्ण जीन एवं उनके विनियामक तंत्र की जानकारी हो जाने पर राल एवं रंजक के पात्रे उत्पादन हेतु इसे दोहराया जा सकता है। उपयुक्त पात्रे (इनविट्रो) तंत्र को इस उद्देश्य के लिए उपयोग में लाया जा सकता है। हालाँकि लाख कीट की उचित कोशिका द्वारा ही राल एवं रंजक का उत्पादन ज्यादा उचित है। लाख कीट–कोशिकाओं को प्रयोशाला में कृत्रिम माध्यम द्वारा संवर्धित किया जा सकता है।

○○○

5

प्रदूषित जल से सिंचाई और मृदा प्रदूषण

डॉ. दिनेश मणि

खेती में सिंचाई जल एक बहुत महँगा साधन है, जिससे लागत–उपज अनुपात असंतुलित होता जा रहा है। कुछ क्षेत्रों का पानी देखने व पीने में सही लगता है परंतु वास्तविकता में मिट्टी व फसलों की सेहत के लिए हानिकारक हो सकता है। फसलोत्पादन में ऐसे पानी का लंबे समय तक लगातार प्रयोग करते रहने के कारण भूमि अनुपजाऊ हो जाती है। खारे या नमकीन पानी से सिंचाई करने पर मृदा के भौतिक, रासायनिक जैविक गुणों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार खारे व निम्न गुणवत्तायुक्त पानी का प्रयोग करते रहने से खेती–योग्य भूमि की उर्वरा शक्ति निरंतर घटती जाती है। लंबे समय तक लवणीय जल से सिंचाई करने पर बीजों के अंकुरण में भी कमी आ जाती है। पौधों की शुरूआती अवस्था में बढ़वार कम होती है और पौधे छोटे रह जाते हैं। कहने का तात्पर्य है कि निम्न गुणवत्ता वाला जल, मृदा स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होता है।

सिंचित क्षेत्रों में सतही व भूमिगत जल के अनुचित व अत्यधिक दोहन के कारण जल स्तर निरंतर नीचे गिरता जा रहा है जिसका भूमि के उपजाऊपन व फसलों की उत्पादकता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। फसलों में अंधाधुंध सिंचाई व सिंचाई की मात्रा बढ़ाने से न केवल जल का अपव्यय होता है बल्कि मृदा का स्वास्थ्य भी खराब होता है। वर्तमान परिवेश में सघन फसल प्रणाली व मशीनीकरण की वजह से भू–जल पर दबाव इतना बढ़ गया है कि भूमिगत जल स्तर दिनों दिन नीचे गिरता जा रहा है। खेती में पारंपरिक सिंचाई प्रणाली उपयोग में लाई जा रही है जिसमें खेतों में सिंचाई जल लबालब भर दिया जाता है। इससे काफी सारा पानी इधर–उधर बहकर या जमीन में रिसकर नष्ट हो जाता है जिसका अंततः मृदा स्वास्थ्य व उत्पादकता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

हमारा देश–कृषि प्रधान देश है। अतः यह स्वाभाविक ही है कि हम कृषि उत्पादन की वृद्धि हेतु सिंचाई जल की गुणवत्ता एवं जल–प्रबंधन की

आवश्यकता को प्राथमिकता के आधार पर स्वीकार करें। यद्यपि प्रमुख सिंचाई परियोजनाओं के फलस्वरूप कृषि उत्पादन में पर्याप्त वृद्धि हुई है, किंतु अधिक सिंचाई तथा जल–वितरण की अपर्याप्त व्यवस्था के कारण जलाक्रांति, लवणता तथा बहुमूल्य जैव–संसाधनों के नष्ट होने की समस्या पैदा हो गई है। इन समस्याओं से निपटने के लिए एक प्रभावशाली कार्यनीति की आवश्यकता है।

प्रायः सभी प्रकार के सिंचाई जल में घुलनशील पदार्थों की कुछ न कुछ मात्रा अवश्य रहती है। जल में घुले पदार्थों की सांद्रता, सिंचाई जल की गुणवत्ता को निर्धारित करती है। कुछ फसलें एवं भूमियाँ जल में घुले नमक एवं पदार्थों के प्रभाव को सहन कर लेती हैं, जबकि दूसरी फसलों पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है। सिंचाई की गुणवत्ता पर निम्न कारकों का प्रभाव पड़ता है :

1) सिंचाई जल में घुले लवणों की सांद्रताः

2250 माइक्रो मोज से अधिक चालकता वाला जल सिंचाई के लिए अनुपयुक्त होता है। 750 माइक्र मोज विद्युत चालकता वाले जल से लवण–सह फसलों की सिंचाई की जा सकती है।

2) सोडियम की सांद्रता तथा कैल्सियम और मैग्नीशियम के योग से सोडियम का अनुपातः सोडियम की उपस्थिति के कारण सिंचाई–जल हानिकारक माना जाता है। परंतु सबसे हानिकारक जल में सोडियम की मात्रा, कैल्सियम और मैग्नीशियम के योग से अधिक पाई जाती है। ऐसा जल सिंचाई वाले स्थान को ऊसर बनाने को कारण होता है।

3) बोरॉन की सांद्रताः तीन पी.पी.एम. (10 लाख भाग में 3 भाग) बोरॉन की उपस्थिति पर केवल सहिष्णु फसलें उगाई जा सकती हैं। एक पी.पी.एम. बोरॉन से कम मात्रा वाला जल सिंचाई के लिए सुरक्षित होता है।

4) कार्बोनेट तथा बाईकार्बोनेट की सांद्रताः सिंचाई जल में कार्बोनेट तथा बाईकार्बोनेट की मात्रा 2.5 मिली–तुल्य प्रति लिटर से अधिक होने पर सिंचाई नहीं करनी चाहिए।

कृषि उत्पादन के प्रमुख आदान के रूप में पानी की व्यवस्थित आपूर्ति में सिंचाई का हिस्सा दो तिहाई से भी अधिक है, किन्तु खाद्यान्न की पैदावार में आत्म–निर्भरता बनाए रखने के लिए सिंचाई–क्षमता में अभी और वृद्धि करने की आवश्यकता है। इसके लिए दो सूत्री कार्यनीति अपनाए जाने की आवश्यकता है। पहली सिंचाई क्षेत्र की प्रमुख कमियों को दूर करने के लिए सुधारात्मक उपायों को लागू करना और दूसरी कार्यनीति के अंतर्गत उपलब्ध जल संसाधनों की समूची क्षमता का उपयोग करने के उद्देश्य से उनका तेजी से विकास करना।

जल–प्रबंधन कृषि कार्यों हेतु जल के नियोजित–उपयोग करने की कला है। इसके अंतर्गत सिंचाई (पौधों को प्राप्य जल की पूर्ति हेतु पानी देना) तथा जल–निकास (फालतू पानी को खेत से बाहर निकालना) सम्मिलित किए जाते हैं। हम इस

तथ्य से भली प्रकार परिचित हैं कि भूमि, जल तथा पौधों में गहरा सम्बंध होता है। पौधों की वृद्धि के लिए एक निश्चित मात्रा में नमी की आवश्यकता होती है। पौधों की वृद्धि के लिए आवश्यक जल की आपूर्ति जब प्राकृतिक संसाधनों द्वारा नहीं हो पाती हैं, तो पौधों की जल की आपूर्ति कृत्रिम रूप से करनी पड़ती है, जिसे हम सिंचाई कहते हैं। प्रबंधन के लिए यह आवश्यक है कि फसल के लिए सही समय पर, सही मात्रा में एवं सही तरीके से जल–प्रबंधन किया जाए।

जिस प्रकार जल की कमी से पौधों की उपज प्रभावित होती है उसी प्रकार जल की अधिकता में भी पौधों की वृद्धि रुक जाती है और उत्पादन–क्षंमता कम हो जाती है। इसलिए उपयुक्त जल प्रबंधन के लिए सिंचाई एवं जल निकास एक–दूसरे के पूरक हैं। सिंचाई–प्रबंधन के अंतर्गत फसलों की सामयिक एवं समुचित जल–मांग की आवश्यकता को पूरा किया जाता है जबकि जल–निकास में आवश्यकता से अधिक पानी को क्षेत्र से बाहर निकालने की योजना बनाई ज ती है।

जल–प्रबंधन में जल संरक्षण की विधियाँ, प्रणालियाँ और तकनीकें, उसके उपचार, प्रयोग, उपयोग और हटाने की क्रियाएँ शामिल हैं जो कम लागत में उत्पाद अथवा स्रोत के सामाजिक और पर्यावरण की दृष्टि से मान्य स्तर प्रदान करती हैं। जल–संरक्षण प्रौद्योगिकी को अपनाकर जल संभरों में जल के बहाव को नियंत्रित किया जा सकता है और इसके द्वारा विभिन्न प्रयोगों के लिए अनेक स्थानों पर जल को इकट्ठा करते हैं। पीने के लिए, उद्योगों अथवा कृषि उपयोग के लिए जल आपूर्ति का एक स्रोत विकसित करके पानी के उपयोग का संचालन और नियंत्रण किया जाता है।

सिंचाई जल की गुणवत्ता में सुधारः

1. सिंचाई–जल में चूना मिलाकर।

2. खराब जल के साथ अच्छे पानी को मिलाकर सिंचाई करने से।

3. गंधक के अम्ल तथा जिप्सम को सिंचाई जल में मिलाकर।

4. जीवांश पदार्थयुक्त जल को सिंचाई जल से मिलाकर।

5. सिंचाई जल से हानिकारक लवणों को अलग करके सिंचाई करने से।

ये विधियाँ अत्यधिक खर्चीली होने के कारण व्यावहारिक दृष्टिकोण से प्रयोग में नहीं लाई जा सकती हैं।

सिंचाई जल–प्रबंधन में ध्यान देने योग्य बातें

1. जलवायु तथा फसल जल–माँग के अनुसार ही सिंचाई करनी चाहिए।

2. सिंचाई जल उपलब्धता के अनुरूप फसलों का चुनाव करना चाहिए जिससे पानी का कुशलतापूर्वक उपयोग किया जा सके।

3. सिंचाई हेतु उपलब्ध जल को अधिक से अधिक क्षेत्र में उपयोग में लाया जाना चाहिए।

4. चयनित किस्मों में उनकी क्रांतिक अवस्थाओं पर सिंचाई करनी चाहिए।

5. फसलों को खरपतवार रहित रखना चाहिए, जिससे उपलब्ध जल का अधिक उपयोग फसलों द्वारा हो सके।

6. उपलब्ध जल से फसल उत्पादन में अधिक लाभ हेतु निर्धारित मात्रा में संतुलित उर्वरकों का उपयोग किया जाना चाहिए।

7. जल स्रोत से खेत तक जल ले जाते समय नाली की सतत् निगरानी रखी जानी चाहिए।

8. सिंचाई द्वारा दिए गए पानी को फसलों के जड़–क्षेत्र में अधिकतम समय तक मौजूद रखने के लिए नमी संरक्षण के उपायों को अपनाना चाहिए।

9. सिंचाई की नई विधियों (बौछारी, टपकन या बूँद–बूँद सिंचाई पद्धति) को अपनाकर सिंचाई की दक्षता बढ़ाई जा सकती है।

10. जल निकास का समुचित प्रबंधन करके किसी भी सिंचाई परियोजना से वांछित लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

प्रति इकाई जल से अधिकतम पैदावार प्राप्त करने के उद्देश्य से सिंचाई करते समय निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना आवश्यक है :

1. सिंचाई कब की जाए?

2. सिंचाई कैसे की जाए? सिंचाई जल किस मात्रा में प्रयोग किया जाए? किस प्रकार के जल से सिंचाई की जाए?

व्यावहारिक दृष्टि से सिंचाई करने के समय का ज्ञान निम्नलिखित विधियों को अपनाकर किया जा सकता है:

i. पौधे के बाह्य गुणों को देखकर।

ii. मृदा की दशा एवं बाह्य गुणों को देखकर।

iii. भूमि में प्राप्त जल की मात्रा एवं नमी के आधार पर।

iv. जलवायु संबंधी आँकड़ों के आधार पर।

v. पौधों की वृद्धि की क्रांतिक अवस्था के आधार पर।

vi. सूचक पौधों की सहायता से।

सिंचाई की सबसे उपयुक्त विधि वह होती है जिसमें जल का समान वितरण होने के साथ ही पानी का कम से कम नुकसान हो तथा कम से कम पानी से अधिक क्षेत्र सींचा जा सके। सिंचाई जल के समुचित उपयोग के लिए यह आवश्यक है कि सदैव पानी की वांछनीय मात्रा का प्रयोग किया जाए। आवश्यकता से कम पानी देने पर जहाँ फसल की वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है, वहीं अधिक पानी के अपवाह/अवसरण द्वारा क्षति होने के साथ ही फसलों की वृद्धि पर भी हानिकारक असर पड़ता है।

फसल के लिए प्रयुक्त सिंचाई जल की संपूर्ण मात्रा (सिंचाई संख्या x प्रति सिंचाई प्रयुक्त जल की मात्रा) को 'जल डेल्टा' के नाम से पुकारते हैं। पौधों की वृद्धि पर सिंचाई की संख्या और जल डेल्टा का विशेष प्रभाव पड़ता है। ऐसा पाया गया

है कि पानी की एक ही मात्रा का प्रयोग करना हुए थोड़ी मात्रा से कई बार सिंचाई करने की अपेक्षा अधिक लाभदायक होता है। प्रायः सिंचाई करते समय शत–प्रतिशत जल उपयोगी नहीं हो पाता, अतएव खेत में आवश्यकता से अधिक पानी देना पड़ता है। इसे समग्र जल के नाम से पुकारते है। इसे निम्न सूत्र से निकालते हैं :

$$\text{समग्र जल की मात्रा} = \frac{\text{सिंचाई के लिए आवश्यकता जलापूर्ति की मात्रा}}{\text{सिंचाई प्रणाली की क्षमता}}$$

दो सिंचाईयों के बीच के अंतराल अवधि को 'सिंचाई की बारंबारता' के नाम से पुकारते हैं। विभिन्न फसलों की सिंचाई करते समय यह आवश्यक होता है, कि किसी फसल–विशेष की सिंचाई निश्चित अवधि से पूर्ण कर लें, क्योंकि, इसमें विलंब होने पर उपज में भारी कमी की संभावना रहती है। किसी खेत में किसी फसल की अधिकतम उपयोग–दर की एक सिंचाई में जितना समय लगता है, उसे 'सिंचाई की अवधि' के नाम से पुकारते हैं।

स्मरण रहे, किसी भी फसल–प्रणाली का असर अंततः जल, जमीन एवं जलवायु पर पड़ता है। अतः इन प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण इस प्रकार किया जाना चाहिए जिससे इनके अनुकूलतम उपयोग के साथ इनकी उपयोग दक्षता में भी वृद्धि हो। इसके लिए देश में प्रचलित विभिन्न फसल की उपमंडलवार प्रणालियों को क्रमबद्ध करके कृषि पारिस्थितिकी एवं उपमंडलवार भू–जैव–भौतिक एवं सामाजिक परिवर्तनशीलता के कारणों का पता लगाना होगा।

विभिन्न स्रोतों से जल संसाधनो की उपलब्धता, जल–संसाधनों के विकास की स्थिति, जल का उपयोग और उसके वितरण की विधि, प्रदूषण की समस्या और उससे संबंधित सामाजिक–आर्थिक पहलुओं पर विश्वसनीय आँकड़ों का डाटाबेस तैयार करने की आवश्यकता है ताकि जल संसाधन विकास योजना तैयार करने हेतु ठोस आधार उपलब्ध हो सके।

इस प्रकार सार–रूप में यह कहा जा सकता है कि जल–संसाधन प्रबंधन एक बहुआयामी प्रक्रिया है जिसमें बुनियादी भौतिक संरचना में रचनात्मक सुधार के साथ–साथ गुणवत्ता युक्त जल की व्यवस्था तथा सामाजिक–आर्थिक पहलुओं का समावेश आवश्यक है।

○○○

6

कोयला उत्खनन क्षेत्र में पर्यावरणीय एवं स्वास्थ्य समस्याएं : एक अध्ययन

डॉ. गजेंद्र कुमार नामदेव

औद्योगिक क्रांति के बाद परंपरागत एवं प्राकृतिक ऊर्जा संसाधनों में कोयले का महत्वपूर्ण स्थान है। कोयले का उपयोग ऊष्मा उत्पादन तथा यांत्रिक ऊर्जा के लिए किया जाता है। ताप विद्युत केंद्रो के अतिरिक्त लोह इस्पात, सीमेंट जैसे भारी उद्योगों के लिए स्थान निर्धारण में इसका महत्वपूर्ण स्थान है।

परतदार चट्टानों के रूप में पाए जाने वाले इस प्राकृतिक संसाधन की चार किस्में हैं–एन्थ्रेसाइट, बिटुमिनस, लिग्नाइट व पीट। कोयला उत्खनन चार विधियों से किया जाता है : वहन या ड्रिफ्ट खदान (drift mine) विवत या खुली खान (open cost mine), कूपकी खदान (shaft mine) तथा आनत खान (slope mine)। वहन तथा आनत खानें पर्वतीय संकुचित घाटियों के क्षेत्र में तथा विवत खानें अधिकतर मैदानी भागों या जलविभाजक क्षेत्रों में पाई जाती है।

देश के अधिकांश कोयला क्षेत्रों का विकास पठारी भागों पर परमियन काल में हुआ। इसे गोंडवाना श्रृंखला से संबंधित कोयला कहा जाता है। ऐसी चट्टानें झारखंड, पश्चिम बंगाल, उड़ीसा एवं मध्यप्रदेश में विभिन्न श्रेणी के नाम से जानी जाती है। मध्यप्रदेश में कोयले का संचय पूर्णतः निम्न गोंडवाना शैलसमूह में पाया जाता है। भारतीय वैज्ञानिक सर्वेक्षण के अनुसार मध्यप्रदेश में देश के कोयले का 7.85 प्रतिशत भाग पाया जाता है। देश में मध्यप्रदेश का झारखंड, उड़ीसा, छत्तीसगढ़ व पश्चिम बंगाल के पश्चात् पाचवां स्थान है। राज्य में दो प्रमुख कोयला क्षेत्र हैं– मध्यभारत कोयला क्षेत्र एवं सतपुड़ा कोयला क्षेत्र। मध्यभारत कोयला क्षेत्र में सिंगरोली (सीधी), शहडोल, अनूपपुर और उमरिया जिले जबकि सतपुड़ा कोयला क्षेत्र में छिंद्रवाड़ा, बैतूल, नरसिंहपुर तथा होशंगाबाद जिले आते हैं।

अध्ययन क्षेत्र–

उमरिया जिले का जोहिला कोयला क्षेत्र, जोहिला नदी घाटी में स्थित है। यहाँ इसका कुल भंडार 32.2 करोड़ टन है। उत्खनन कार्य साउथ ईस्ट कोल फील्ड लिमिटेड (SECL) द्वारा किया जाता है।

नौरोजाबाद क्षेत्र में लगभग तीन दशक पूर्व छः खदानों से उत्खनन कार्य बंद हो चुका है। यह क्षेत्र एसोसिएट सीमेन्ट कंपनी (ए.सी.सी) के कार्य क्षेत्र के अंतर्गत आता था जबकि वर्तमान में इसका स्वामित्व साउथ ईस्टर्न कोल लिमिटेड (एस.ई.सी. एली) के पास है। कार्य–क्षेत्र में सम्मिलित छह खदानों में से कुछ के मुहाने ईंट की दीवार से बंद कर दिए गये हैं। खदान संख्या चार एवं छह के मुहाने अभी भी खुले हुए हैं। उत्खनन बंद होने के कारण यहाँ आवासी बस्तियाँ विकसित हो गईं हैं। यहाँ स्थित नौरोजाबाद शहर, सोलह वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में विस्तृत है। इसी के आसपास अन्य छोटे गाँव भी हैं। इनमें मुंडीखोली, टिकरा टोला, खुदरगवां, गधादफाई, कोलदफाई, लैकादफाई आदि प्रमुख हैं।

ए.सी.सी. और उसके पश्चात् पूरे खदान क्षेत्र का स्वामित्व प्राप्त करने वाली एस.ई.सी.एल. दोनों ने ही खदाने बंद करने के निर्धारित नियमों का पालन नहीं किया। कोयला उत्खनन के पश्चात् इन्हें रेत से भरकर मुहाने करे ईंट की दीवार से बंद किया जाना अनिवार्य होता हैं। साथ ही चेतावनी की सूचना लगाना भी अनिवार्य है। रेत से विशाल खदानें भरना खर्चीला कार्य है। अतः अधिकांश खदानें सामान्यतः मिट्टी या मुरम से भरकर अथवा सीधे ईंट से ही बंद कर दी गई हैं। खदान की जमीन को संरक्षित व सवंर्धित किए बिना निकाय क्षेत्र में बस्तियाँ बसने से जमीन पर दबाव बढ़ा है। इसके अतिरिक्त निरंतर निर्माण–कार्यों तथा भारी वाहनों के आवागमन से यहाँ जमीन धसकने की घटनाएँ बढ़ गई हैं। पूरे शहर में लगभग सौ से अधिक खतरनाक गोफ (गड्ढे) हो चुके हैं। खोखली भूमि के ऊपर बनी बस्तियों व निर्माण कार्यों में छोटी–मोटी दुर्घटनाएँ होती रहती हैं जबकि भविष्य में किसी बड़ी दुर्घटना से इनकार नहीं किया जा सकता। खदानों की दरारों से निष्कर्ष जहरीली गैसें तथा धुआं निरंतर क्षेत्र के पर्यावरण को प्रदूषित कर रहा हैं।

पर्यावरण पर प्रभाव

• खदाने धंसकने से कई फीट गहरे गड्ढों का बनना व भूमि क्षरण की समस्या उत्पन्न हो गई हैं।

• खाली भूमिगत खदानें रेत से न भरे जाने के कारण कोयले में पाई जाने वाली ये गैस वायु के संपर्क में आकर स्वतः प्रज्वलित हो जाती है; जिससे खदान में स्थित अवशिष्ट कोयले में आग लग जाती है।

• कोयला जलने से कार्बन मोनो ऑक्साइड, सल्फर डाई ऑक्साइड, नाइट्रोजन ऑक्साइड निकलती है। ये गैसें पर्यावरण को प्रदूषित करती हैं।

• सल्फर डाई ऑक्साइड से भूमि की उर्वरा क्षमता नष्ट होती है।

• नाइट्रोजन ऑक्साइड भूतल पर धुए से धूमकुहा (स्मॉग) कर निर्माण करती है। इससे वैश्विक भू–तापन का खतरा बढ़ जाता है।

• अचानक भूमि धंसकने से हल्के भूकंपीय झटकों की संभावना बनी रहती है।

• वर्षा जल के खदानों में भरने से दुर्घटना की आशंका बनी रहती है।

स्वास्थ्य पर प्रभाव

• कार्बन मोनो ऑक्साइड से आवासीय बस्तियों के लगभग आठ हजार लोगों की रोग–प्रतिरोधक क्षमता प्रभावित हुई है।

• कार्बन मोनो ऑक्साइड से हृदय–संबंधी रोगों के अतिरिक्त कैंसर की संभावना भी उत्पन्न हुई है।

• आँखों में जलन व श्वसन–प्रक्रिया पर भी विपरीत प्रभाव पड़ा है।

• सल्फर डाई ऑक्साइड से तंत्रिका तंत्र प्रभावित होता है तथा कोशिकाए जल जाती हैं।

• निंरतर प्रदूषित वातावरण में निवास करने से कार्यक्षमता भी प्रभावित होती हैं।

उपसंहार

मानव कल्याण एवं विकास के लिये संसाधन आवश्यक हैं। दोनों का अस्तित्व एक दूसरे के बिना व्यर्थ है। आधुनिक युग में संसाधनों के दोहन के प्रति लालच बढ़ गया है। अत्यधिक उत्खनन एवं उत्खनन–पश्चात् समुचित प्रबंधन के अभाव ने मानव एवं पर्यावरण के प्रति, प्रतिकूल परिस्थितियाँ उत्पन्न कर दी हैं। अतः संसाधनों के विवेकपूर्ण निष्कर्षण, उपयोग एवं निष्कर्षण पश्चात् प्रबंधन आवश्यक है। प्रभावित क्षेत्र में निम्न उपाय त्वरित किए जाने चाहिए :

• असुरक्षित भूमिगत खदानों का सर्वेक्षण कर उनका समुचित प्रबंधन किया जाए।

• प्रदूषण बोर्ड द्वारा चिकित्सा उपरांत समुचित कार्यवाही की जाए।

• प्रभावित क्षेत्रों में विशेष चिकित्सा शिविर आयोजित कर विशेषज्ञ चिकित्सकों द्वारा स्वास्थ्य परीक्षण करवाया जाए।

• संवेदनशील खदानों में प्रदूषण एवं आकस्मिक दुर्घटना के प्रति जागरूकता अभियान चलाया जाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची

• चौबे, कैलाश "चिकित्सा/स्वास्थ्य भूगोल" म.प्र. हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।

• दैनिक भास्कर, छिंदवाड़ा (2015) 12 दिसंबर पृ. 05।

• दैनिक भास्कर, छिंदवाड़ा (2015) 18 दिसंबर पृ. 05।

• मामोरिया, चतुर्भज, (2006): "भारत का बृहत् भूगोल" साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा।

• सिंह, जगदीश, सिंह, काशीनाथ, (2007): "आर्थिक भूगोल के मूलतत्व" राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली।

• सिंह, सविंद्रः (2004): पर्यावरण भूगोल, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद।

• शर्मा, श्रीकमल, (2014): "मध्यप्रदेश का भूगोल" म.प्र. हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।

○○○

7

वर्मी कंपोस्ट

डॉ.सी.पी.सिंह

वर्मी कल्चर :– केंचुओं को वर्म्स तथा संवर्धन द्वारा उनकी संख्या–वृद्धि की विधि को वर्मी कल्चर कहते हैं तथा केंचुओं की विष्ठा को 'वर्मी कंपोस्ट' कहते हैं। सुव्यवस्थित रूप से गोबर एवं कूड़े करकट (सड़े गले पदार्थों) को केंचुओं के माध्यम से पचाकर निर्मित की गयी कंपोस्ट की प्रक्रिया को 'वर्मी कल्चर बायोटैक्नोलॉजी' कहते हैं, जिससे जैविक खाद एवं केंचुओं का उत्पादन एक साथ होता हैं।

अंतिम पृष्ठ 6 का मैटर यहाँ लाए

केंचुआ संघ (फाइलम) एनीलिड़ा (Annelide) वर्गऑलिगोकीटा में आते हैं। विश्व में इनकी लगभग 10 फैमिली, (कुल) 240 वंश (जीनस) और लगभग 3320 स्पीशीज़/प्रजातियाँ पायी जाती हैं। इनमें से इनकी दो प्रजातियाँ आइसीनिया फिटिडा यूड्रिलस यूजीयूजनि/ (Eisenia foetida & Eudrilus eugeniae) का प्रयोग वर्मी कंपोस्ट बनानें में किया जाता है। आइसीनिया फिटिडा जो प्रमुखतः भारत में प्रयोग में लाया जाता है, की लंबाई 3 से 4 इंच व भार 0.8 –1.4 ग्राम तक होता है। इसे रेड़ वर्म कहते हैं। अंडजोत्पत्ति के बाद 50–60 दिन में कोकून देते हैं तथा प्रति कोकून से 6–14 बच्चे निकलते हैं। इनका जीवन काल 75 से 90 दिन का होता है।

केंचुआ सदियों से कृषकों का मित्र रहा है। कुछ निम्नलिखित प्रमुख विशिष्ट गुणों के कारण हम इन्हें 'किसानों का मित्र' कहते हैं:–

1. केंचुआ प्रतिदिन भूमि की परत में कईवार ऊपर नीचे चलता है, जिससे भूमि की सरंध्रता बढ़ती है।

2. केंचुए की आतें आरीनुमा होती हैं, जो कठोर जीव–अवशेष मिट्टी, पत्थर जैसे पदार्थों का चूर्ण बना लेते हैं। जिससे इसकी खाद में पोषक तत्वों के अतिरिक्त प्रकिण्व (एन्जाइम), विटामिन एवं सूक्ष्म जीवाणु प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं।

3. केंचुए फसलों के अवशेषों एवं अन्य जैविक अवशेषों और गोबर इत्यादि जो कि भूमि की सतह पर पाए जाते हैं, को मृदा में मिला देते हैं।

4. ये जीव जटिल कार्बनिक पदार्थों का विघटन कर पौधों को अवशोषण योग्य बना देते हैं।

5. कार्बनिक पदार्थ एवं मृदा जब केंचुएँ के आहार नाल से होकर निकलती है तो इसमें कई तरह की एन्जाइमी क्रियाएँ होती हैं, जिससे सूक्ष्म जीवों की गतिविधियाँ बढ़ जाती हैं। फलस्वरूप कार्बनिक पदार्थों के विघटन की गति बढ़नें के साथ–साथ मृदा में कार्बनः नाइट्रोजन अनुपात उचित बना रहता है।

6. केंचुए अपनी विभिन्न गतिविधियों जैसे सुरंग निर्माण, आहार आदिं के माध्यम से मृदा में वायु संचार को बढ़ावा देते हैं। रंध्रमय/मृदा हो जानें से जल का आवागमन आसान हो जाता है, जिससे लम्बे समय तक मृदा में नमी बनी रहती हैं।

वर्मी कंपोस्ट तैयार करने की विधिः क्यारी तैयार करना

जैविक अवशिष्ट को गोबर में मिलाकर केचुएं के लिए क्यारी का निर्माण किया जाता है। क्यारी बनाने से पूर्व 8–10 इंच अधसड़ा कचरा व इसके ऊपर 1.5–2.0 फुट गोबर तथा कूडा करकट की परत बिछाकर लगभग 3–4 दिनों तक पानी से अच्छी तरह भिगो देना चाहिए। क्यारी की चौड़ाई लगभग 2.0 से 3.0 फुट ऊंचाई 1.5 से 2.0 फुट और लम्बाई 3.0 फुट लगभग 1 किग्रा. केचुओं के लिए उचित रहती है।

वर्मी कंपोस्ट को अधिक उपयोगी बनाने के लिए उक्त माप के अनुसार क्यारी को सीमेंट से पक्का बना लेना चाहिए जिससे कि वर्मी कम्पोस्ट से निकलने वाला वर्मीवाश बहकर नष्ट न हो। साथ ही क्यारी के निचले किनारे पर एक गड्ढा बना लेना चाहिए, जिसमें वर्मीवाश एकत्रित हो सके। उत्पादन लागत कम करने के लिए पक्के फर्श के स्थान पर पॉलिथिन की चादर का प्रयोग भी किया जा सकता है। वर्मीवाश का प्रयोग पौधशाला एवं फूलों में किया जा सकता है।

सावधानियाँः

(अ) केचुएँ की उचित प्रजाति का चयन करना चाहिए।

(ब) क्यारी को सूर्य के प्रकाश से बचाना चाहिए। क्यारी को हमेशा बोरी के टाट से ढ़ककर रखना चाहिए।

(स) क्यारी पर सूखी घास, ताजा गोबर तथा अधिक पुरानें गोबर का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

(द) क्यारी में हमेशा नमी बनी रहनी चाहिए। इसके लिए सप्ताह में दो बार पानी का छिड़काव करना चाहिए।

वर्मी कम्पोस्ट के लाभः

(1) वर्मी कम्पोस्ट से घरेलू, कृषि ग्रामीण शहरी एवं औद्योगिक अवशिष्ट उत्पादों की बहुत बड़ी मात्रा को पुनः चक्रण (रिसाइकिंग) कर प्रयोग किया जा सकता है जिससे निश्चित तौर पर पर्यावरण में प्रदूषण कम होता है।

(2) वर्मी कम्पोस्ट प्रयोग करने पर पौधों में प्रतिरोधक क्षमता का विकास हो जाता है, जिससे कृषि रक्षा कार्य पर कम व्यय करना पड़ता है।

(3) जैविक खेती से प्राप्त उत्पाद स्वास्थ्य के लिए हितकर होते हैं। बाजार में उनका अधिक मूल्य प्राप्त किया जा सकता है।

(4) वर्मी कम्पोस्ट में फार्मयार्ड कम्पोस्ट की तुलना में मुख्य पोषक तत्व अधिक मात्रा में पाये जाते हैं। जिनका तुलनात्मक विवरण निम्नवत् है :

क्र० सं	तत्व	वर्मी कम्पोस्ट	फार्मयार्ड कम्पोस्ट
01	नाइट्रोजन%	2.0 – 2.8	0.8 – 1.2
02	पोटाश%	1.2 – 2.5	0.5 – 0.6
03	फास्फोरस%	1.3 – 2.4	0.5 – 0.7

इन तत्वों के अतिरिक्त वर्मी कम्पोस्ट में सूक्ष्मजीव (नाइट्रोजन यौगिकीकरण जीवाणु, फॉस्फोरस सॉल्यूब्लाइजिंग बैक्टीरिया, एक्टिननोमाइसिटीज) आदि भी पाए जाते है, जो कि कई वर्षों तक भूमि की सजीवता को बनाये रखते हैं। वर्मी कम्पोस्ट की इकाई को कम लागत में स्थापित कर इस उद्यम से उद्यमी स्वरोजगार प्राप्त कर सकते है।

इससे प्रत्यक्ष उत्पाद जैसेः– वर्मी कम्पोस्ट, केंचुआ, वर्मी प्रोटीन, वर्मीवाश तथा अप्रत्यक्ष उत्पाद जैसेः– कार्बनिक खेती से प्राप्त फसल, सब्जी, फल आदि द्वारा अधिक मूल्य प्राप्त होनें पर अच्छी आय प्राप्त की जा सकती है। इससे स्वरोजगार प्राप्त किया जा सकता हैं।

○○○

8

मधुमेह के उपचार में उपयोगी पारम्परिक जड़ी–बूटियाँ

डॉ. चंद्रप्रकाश शुक्ल

हमारे पेट में आमाशय के पीछे पाचक रस का स्राव करने वाली ग्रंथि अग्न्याशय (पैन्क्रियाज) स्थिर है, जिससे इन्सुलिन हार्मोनों का स्राव होता है। यह इन्सुलिन शरीर में शक्कर की मात्रा पर अंकुश लगाती हैं। चिंता, गम, क्रोध, तनाव इत्यादि से भी, इन्सुलिन का स्राव कम हो जाने से शक्कर की मात्रा खून में जरूरत से ज्यादा बढ़ जाती हैं। यही शक्कर मूत्र द्वारा शरीर से बाहर निकल जाती है, जिसे मधुमेह (डायबिटीज) कहते हैं।

इस भयानक रोग से छुटकारा निम्न वनस्पतियों द्वारा पाया जा सकता है।

अर्जुन

कॉम्ब्रेटासी कुल के इस विशाल वृक्ष का वानस्पतिक नाम **टेर्मिनेलिआ अर्जुना** है। जो नदियों के किनारे, बगीचों में तथा सड़कों के किनारे पाए जाते हैं। इनकी छाल बाहर से सफेद तथा अंदर से चिकनी, मोटी एंव हल्के गुलाबी रंग की होती हैं, जो पतले–पतले चप्पड़ों में छूटती हैं। इसकी छाल में अर्जुनीन नामक रंगहीन क्रिस्टलाइन तत्व, अर्जुनेटिन, लैक्टोन एवं टैनिन पाया जाता हैं। छाल का औषधीय उपयोग हृदय रोग व धमनियों में स्क्त प्रवाह के रोगों के लिए किया जाता हैं। इसके फल का उपयोग मधुमेह जैसी व्याधियों में पाउडर तथा टॉनिक के रूप में किया जाता हैं।

अलसी

लीनासी कुल के इस पौधे का वानस्पतिक नाम **लीनुग उसीठीस्सिमुम** है। तीसी के नाम से विख्यात इस फसल की खेती जाड़े में की जाती है। जो अंतराशस्य फसलों के रूप में बोयी जाती हैं। इसके पुष्प नीले रंग के आर्कषक होते हैं। तीसी का तेल एक मीठा तेल होता हैं, जो जलाने एवं खाने में प्रयोग होता है। इसके बीजों के चूर्ण में स्टार्च के कण पाए जाते हैं। कच्चे बीजों एवं पुष्प में हाइड्रोसायनिक एसिड तथा लाइपेरीन नामक ऐल्केलॉइड पाया जाता है। इसके बीजों का चूर्ण तथा तेल मधुमेह रोगियों के लिए लाभदायक हैं।

असन

कॉम्ब्रेटासी कुल के इस वृक्ष का वानस्पतिक नाम **टेर्मिनेलिआ टोमेन्टोसा** है। यह विशाल वृक्ष काष्ठ, छाल तथा गोंद प्रदान करता हैं। इसके पत्ते तिरछे सफेद हल्के पीलें पुष्प मंजरियों में होते हैं। इसकी छाल में ऐरेबीनॉज, जाइलोस तथा टैनिन पाए जाते हैं। इसके काष्ठ तथा छाल का चूर्ण–ढाई ग्राम आधा चम्मच दूध के साथ नित्य तीन बार सेवन से मधुमेह में लाभ मिलता हैं।

आँवाहल्दी

स्किटामिनासी कुल के इस क्षुप का वानस्पतिक नाम **कुर्कूमा ऐरोमाटिका** हैं। इसकी जड़ व तना अंदर से पीले रंग की, आम जैसा सुगंध वाला, पुष्प हल्के सफेद हरे रंग के होते हैं। इसके कंड में करक्युमिन नामक रासायनिक घटक पाया जाता हैं। इसके इसके कांड का पाउडर काले नमक के साथ सेवन करने से कृमि नष्ट होते हैं। मधुमेह के रोग में उपयोगी चूर्ण में हल्दी का पाउडर उपयोगी होता हैं। शरीर के किसी भी अंग को आघात पहुँचने पर, ऑवाहल्दी को जल में पीसकर थोड़ा गरम कर दर्द वाले स्थान पर लगाने से तकलीफ दूर हो जाती हैं।

आँवला

एउफार्बिआसी कुल के इस मध्यम कद के वृक्ष का वानस्पतिक नाम **फाइलेन्थास ऑफ्फीसिनालिस** हैं। इसके पत्ते इमली जैसे दिखाई देते हैं। विटामिन सी का प्रचुर स्रोत वाले आँवला के फल में गैलिक अम्ल तथा इलैगिक ऐसिड़ होता हैं। इसके बीज मे लिनोलिक अम्ल व ओलिक अम्ल पाया जाता हैं। इसका फल स्क्तस्राव, मधुमेह, प्रमेह, सिर दर्द, मुर्छा तथा अतिसार में लाभकारी हैं। योनिदाह में आँवले के फल में रस में मिश्री मिलाकर सेवन से शीघ्र आराम मिलता हैं। आँवलें का फल तथा पत्ती त्रिदोषनाशक हैं।

छोटी इलायची

जिंजिबरासी कुल के इस सुगंधित शाकीय पौधे का वानस्पतिक नाम **एलेट्टारिआ कार्डामोमुम** हैं। इसके बीज में स्टार्च, वाष्पशील तेल होता है, जिसमें टर्पेनियॉल पाया जाता हैं। मधुमेह में इसके बीज का सूक्ष्मचूर्ण आँवले के रस के साथ सेवन करने से शीघ्र आराम मिलता हैं। रक्त प्रदर तथा रक्तमेह में इलाइची के दाने, केसर, जायफल, वंश लोचन, नागकेसर तथा सफेद जीरे का चूर्ण समान मात्रा में मिलाकर सुबह–शाम एक ग्राम लेने से शीघ्र आराम मिलता हैं।

कचनार

फेबेसी कुल के इस मध्यम कद वाले वृक्ष का वानस्पतिक नाम **बाहोनिआ वारिएगाटा** हैं। ये लाल तथा सफेद दो प्रकार के दिखाई पड़ते हैं। यह जंगलों में तथा बीहड़ों में दिखाई देते हैं। कचनार की छाल में टैनिन, शर्करा और एक भूरे रंग का गोंदाय पदार्थ पाया जाता हैं। इसके विकसित पुष्पों का गुलकंद मधुमेह में लाभकारी हैं। इसके छाल का चूर्ण रक्तमेह में प्रभावकारी होता हैं।

करंज

फेबेसी कुल के इस वृक्ष का वैज्ञानिक नाम **पोंगेमिआ पिन्नाटा** हैं। ये नदियों के किनारे, सड़कों के किनारे तथा जलाशयों के समीप पाए जाते हैं। इसके पत्ते पक्षवत संयुक्त, पत्रवृंत आधार पर फूला हुआ पत्रक चमकीले, चिकने नुकीले, संख्या में 5–7 होते हैं। इसके बीज में एक कड़वा तेल करंजिन पाया जाता हैं। मधुमेह में इसके पुष्पों का फांट पिलाने से लाभ होता हैं। पायरिया में इसके दातून करने से आराम मिलता हैं।

करेला

कुकुरबिटेसी कुल के इस लता का वानस्पतिक नाम **मोमोर्डिका कारांठिआ** हैं। करेला एक प्रसिद्ध फल शाक है। इसकी सुदीर्ध आरोही या भूमि पर फैलने वाली लताएँ होती हैं। इसका संपूर्ण अंश विशेषतः पत्र एवं फल उपयोगी होता हैं। करेले का रस मधुमेह शर्करा को कम करता हैं। अतः अनुपान के रूप में तथा पथ्य के रूप में करेला मधुमेह के रोगियों के लिए उत्तम हैं।

कुनंरू

कूकुरबिटासी कुल के इस सब्जी वर्गीय लता का वानस्पतिक नाम **कॉक्सीनिआ कार्डिफोलिआ** हैं। कुनरू की बेल प्रायः पान के बाड़ों में लगाई जाती हैं। कुनरू की बहुवर्षीय स्वरूप की अनेक शाखा–प्रशाखायुक्त फैली हुई आरोहणशील लताए होती हैं। इसकी जड़ में बीटा–एमीरीन, बीज में पामीटिक अम्ल तथा वनस्पति में एमिनो अम्ल पाए जाते हैं। इसके कांड एवं पत्तों का रस मधुमेह रोगियों में लाभप्रद हैं। इसके फल का शाक के रूप में प्रयोग कर ज्वर, कास, कामला व खाज–खुजली से बचा जा सकता हैं।

गुड़मार

आस्क्लेपिआडासे कुल के इस पौधे का वानस्पतिक नाम **जीम्नेमा सील्वेस्ट्रे** हैं। यह काष्ठीय परंतु पतले–पतले कांड की तथा बहुशाखी चक्रारोही लता होती हैं। इसकी पत्तियों में घुलनशील रेजिन की मात्रा ज्यादा होती हैं। पत्ती में 6 प्रतिशत जिम्नेमिक अम्ल पाया जाता हैं। मधुमेह व्याधि में गुड़मार के पत्तों का प्रयोग अत्यंत लाभकारी हैं।

गुडूची (गिलोय)

मेनिस्पेर्मासे कुल के इस आरोही लता का वानस्पतिक नाम **टीनोस्पोरा कॉर्डिफोलिआ** हैं। इसकी पत्तियाँ हदयाकार होती हैं। गिलोय की जड़, फल, पत्ती का प्रयोग औषधीय रूप में किया जाता हैं। यह त्रिदोषनाशक, बलदायक, रक्तशोधक, मधुमेहनाशक व कृमिनाशी आदि गुणों से युक्त होता हैं। गिलोय में मुख्य रूप से बर्बेटिन एल्केलॉयड एवं गिल्गेइन ग्लाइकोसाइड पाए जाते हैं। इसके अतिरिक्त वाष्पशील तेल गिलोस्टोरेल आदि भी पाए जाते हैं। इसे अमृता वल्लरी के नाम से भी जानते हैं।

गुड़हल

माल्वासी कुल के इस आड़ीदार पौधे का वानस्पतिक नाम **हिबिस्कस रोजासाइनेन्सिस** हैं। इसके फूल आकर्षक एवं शोभाकारी होते हैं। इसके पत्तों में एल्केलायड, एस्कार्बिक अम्ल तथा सायनिन

रासायनिक घटक पाए जाते हैं। गुड़हल के पुष्प का सेवन करने से मधुमेह में शीघ्र आराम मिलता हैं। इसके पत्तियों का रस गर्म कर सेवन करने से ज्वर दूर हो जाता हैं।

चिरायता

जेन्टिआनासे कुल के इस वनस्पति सम्पदा का वैज्ञानिक नाम **स्वेर्टिआ चिरेटा** हैं। इसमें चिरेटिन व ओफेलिक अम्ल नामक सक्रिय घटक पाए जाते हैं। मधुमेह रोगी चिरायता की छाल को पीतल या तांबे के बर्तन में मिलाकर 6–7 घंटे बाद जल पीने से मधुमेह में लाभकारी हैं।

जामुन

मीर्टासे कुल के इस उँचे–उँचे सदाहरित वृक्ष का वानस्पतिक नाम **सीजीजिउम क्यूमिनी** हैं। इसके बीज में जम्बूलिन नामक ग्लूकोसाइड, वाष्पशील तेल, टैनिन तथा गोंद पाए जाते हैं। इसके कोमल पत्ते होते हैं। गुठली का चूर्ण मधुमेह एवं उदकमेहनाशक, रक्तप्रदरनाशक होते हैं। प्रमेह के रोगियों के लिए जामुन एक उत्तंम खाद्य हैं। इसके पत्ते का रस भी सामान्य रूप से उपयोगी हैं।

तुलसी

लेमिआसे कुल के इस धार्मिक व औषधीय गुणों से परिपूर्ण पौधे की वनस्पतिक नाम विभिन्न जातियाँ विशेष महत्व की है यथा **ऑसीमुम बासीलिकुम, ऑसीमुम ग्राटीस्सिमुम** (रामा तुलसी) यथा **ऑसीमुम कानुम** (कृष्ण तुलसी)। इनके समस्त अंग उपयोगी होते हैं। यह कफनाशक, दुर्गंध नाशक, दीपन–पाचन कृमिनाशक, रक्त शोधक, ज्वरहर तथा मधुमेहनाशक हैं। इसकी पत्तियों में पीताभहरित रंग का वाष्पशील तेल पाया जाता हैं। मधुमेह रोगियों में इसकी पत्तियों का प्रयोग लाभकारी होता हैं।

पिप्पली

पीपरासे कुल के इस लता का वानस्पतिक नाम **पीपेर लोंगुस** हैं। यह पतली, सुगंधित, आरोही लता या बेलनुमा झाड़ी हैं। इसकी जड़ें बहुवर्षीय तथा कटीली होती हैं। इनमें पिपरीन तथा पिप्लेर्टीन् क्षार होते हैं। पिप्पली के तने तथा फलों का उपयोग सर्दी, जुकाम, अस्थमा, पीलिया तथा, चर्मरोगों में किया जाता हैं। इसके फल का चूर्ण गरम मसालों तथा मधुमेहनाशक के रूप में किया जाता हैं।

नीम

मेलिआसे कुल के इस वृक्ष का वानस्पतिक नाम **आजाडीराक्टा इंड़िका** हैं। इसके बीज एवं बीजों से प्राप्त तेल का उपयोग मधुमेह रोगियों के घाव को भरने में किया जाता हैं। इसके छाल का चूर्ण कृमिनाशक तथा व्रणनाशक हैं। इसकी कोमल पत्तियों का प्रयोग मधुमेहनाशक, ज्वरनाशक तथा कीटनाशाक के रूप में किया जाता हैं। इसकी छाल में निम्बीन या मार्गोसीन नामक गोंद पाया जाता हैं।

पुनर्नवा

निक्टाजिनासे कुल के इस क्षुप का वानस्पतिक नाम **बोएर्हाविआ डीफ्फूजा** हैं। वर्षा के दिनों में

इसके छोटे–छोटे पौधे खूब दिखाई पड़ते हैं। इसकी जड़ में पुनर्नवीन नामक ऐल्केलाइड पाया जाता हैं। इस पौधे का संपूर्ण अंग उपयोगी होता हैं। यह यकृत रोग की अचूक दवा हैं। इसके जड़ का रस मधुमेहनाशक, त्रिदोषहर तथा कृमिघ्न होता हैं।

लाजंवती

फेबेसी कुल के इस प्रसरणशील गुल्म का वानस्पतिक नाम **मिमोसा पुडिका** हैं। इसे 'टच मी नाट' अर्थात् छुई–मुई के नाम से भी जानते हैं। इसके पत्तें, संयुक्त तथा संवेदनशील होते हैं। इसके पत्तों में स्टीग्मास्टीरॉल, ल्युकोएन्थासायनीडीन, ग्लाइकोसाइड; बीजों में स्टीथेरीक अम्ल तथा बेहनीक अम्ल पाया जाता हैं। यह शीतल, चरपरा तथा वातानुलोमक होती हैं। इसकी जड़ों को तेल में पकाकर ड्रेसिंग करने से मधुमेह रोगी के घाव शीघ्र दूर हो जाते हैं। इसके पत्तें का चूर्ण दूध के साथ सेवन करने से मधुमेह में लाभ होता हैं।

बबूल

फेबेसी कुल के इस वृक्ष का वानस्पतिक नाम **आकासिआ आराबिका** हैं। इसकी छाल एवं गोंद प्रसिद्ध औषधि द्रव्य हैं। इसकी कोमल एवं नवीन शाखाएँ चिकनी होती हैं, जिनका उपयोग दातून के रूप में किया जाता हैं। इसकी छाल में बीटा–ऐमीरीन, गोंद में गैलेक्टोस व एरेबीक अम्ल, बीज में थायमिन, नियासीन व अमीनों एसिड़ पाया जाता हैं। इसके गोंद को चूसने से अतिसार तथा मधुमेह में लाभ मिलता हैं। इसकी कोमल पत्तियों के एक चम्मच रस में थोड़ा सा हरड़ का चूर्ण मिलाकर सेवन करने से सभी प्रकार के प्रमेह ठीक हो जाते हैं।

बरगद

मोरॉसी कुल के इस वृक्ष संपदा का वानस्पतिक नाम **फाइकस बेंगालेन्सिस** हैं। बरगद के सदाहरित विशालकाय छायादार वृक्ष होते हैं। यह वृक्ष भारतीय संस्कृति का संवाहक व पोषक है। इसकी छाल में दस प्रतिशत टैनिन, मोम और रबड़ होता हैं। इसके कंड की छाल का क्वाथ मधुमेह, वातज प्रमेह तथा अतिसार में लाभदायक होता हैं। इसकी जटा का प्रयोग सूजाक में, वमन रोकने के लिए तथा चर्म रोगों में लाभकारी हैं। योनि–दाह में इसकी छाल का चूर्ण दूध के साथ सेवन करने से लाभ होता हैं।

बेल

रुटासें कुल के त्रिपत्तीय वृक्ष संपदा का वानस्पतिक नाम **एम्ले मार्मेलॉस** हैं। इसके फलों में बिल्वीन या मार्मेलोसिन नामक यौगिक पाए जाते हैं। इसके अलावा गूदे में लबाव, पेक्टिन, शर्करा आदि पाए जाते हैं। श्री फल के नाम से विख्यात यह वृक्ष धार्मिक महत्व का होने के साथ साथ इसका औषधीय महत्व भी हैं। इसकी पत्तियों का प्रयोग मधुमेह नाशक के रूप में किया जाता हैं। इसके फल का चूर्ण उदर रोगों तथा फल का शर्बत संग्रहणी व शीतलता प्रदान करने में लाभप्रद होता हैं।

मकोय

सोलानासे कुल के इस छोटे क्षुप का

वानस्पतिक नाम **सोलानुम नीगुम** हैं। इसके समस्त पौधें में विशेषतः फलों में काकमाचीन या सोलेनीन नामक एल्केलॉइड पाया जाता हैं। मकोय की पत्ती का रस मधुमेह नाशक के रूप में किया जाता हैं। इसके फलों का प्रयोग सूजन, यकृत रोगों में, तथा विभिन्न प्रकार के प्रमेहों में किया जाता हैं।

मुलेठी

लोगमिनेसी के इस झाड़ीदार पौधे का वानस्पतिक नाम **ग्लिसिराइजा ग्लैब्रा** हैं। इसे जेठीमधु तथा जरातीमधु भी कहते हैं। ताजा मुलेठी में ग्लिसराइजिन नामक प्रधान घटक पाया जाता है जिसके कारण यह मीठी होती हैं। इसके सुखे चूर्ण का उपयोग पेप्टिक अल्सर, गैस्ट्रिक, एनीमिया तथा मधुमेह नाशक के रूप में किया जाता हैं।

मेथी

फेबेसी कुल के इस पौधे का वानस्पतिक नाम **ट्रीगोनेल्ला फीनुम–ग्रीकुम** हैं। इसके बीज में ट्रीगोनैलीन, कोलीन, फ्लेवोनॉयड, ग्लाइकोसाइड एमीनो अम्ल तथा सेपोनीन्स पाए जाते हैं। अंकुरित बीजों में विटामिन–सी पाया जाता हैं। मधुमेह में इसके बीज अंकुरित कर सेवन से लाभ होता हैं। इसके सूखे चूर्ण को प्रतिदिन 5 ग्राम गाय के दूध के साथ सेवन करने से रक्त शर्करा में शीघ्र आराम मिलता हैं।

शीशम

फेबेसी कुल के इस वृक्ष का वानस्पतिक नाम **डाल्बेर्जिआ सिस्सू** हैं। यह पतझड़ करने वाला वृक्ष होता हैं। इसके काष्ठ में एक तेल पाया जाता हैं। बीजों में भी एक वाष्पशील तेल पाया जाता हैं तथा फनियों में टैनिन पाया जाता हैं। इसके तेल का प्रयोग घाव को भरने में तथा चर्म रोगों में लाभकारी हैं। इसकी पत्तियों का प्रयोग मधुमेहनाशक तथा आमाशयगत रोगों में किया जाता हैं। शीशम, सदाबहार व नीम की पत्तियों को चबाकर सेवन करने से मधुमेह में एवं शारीरिक कमजोरी में भी लाभ होता हैं।

शरीफा

अन्नोनासे कुल के इस फलदार वृक्ष का वानस्पतिक नाम **अन्नोना स्कवमोशा** हैं। यह लघु वृक्ष, पुष्प काष्ठीय शाखाओं पर उत्पन्न होते हैं। इसके पुष्प हरित–श्वेत, पंखुड़िया मांसल, फल हरे–पीले समूह में होते हैं। इसके पत्तों में एनोनन, रॉमेरीन, डायजेपीन, कम्पर एवं बोरमिऑल घटक पाए जाते हैं। इसकी पत्तियों का रस मधुमेह नाशक के रूप में किया जाता हैं। दाह एवं रक्त पित्त में फल का प्रयोग लाभकारी हैं।

सदाबहार

एपोसायना से कुल के इस पौधे का वानस्पतिक नाम **विंका रोजिया** हैं। इसके उन्नत पौधें 30–60 सेमी. उँचे गुल्म, पत्र सादा, अभिमुख, पुष्प सफेद गुलाबी रंग के होते हैं। इस वनस्पति में विन्कामाईन, विनब्लास्टीन, विनक्रिस्टीन आदि रासायनिक घटक पाए जाते हैं। इसके फल का उपयोग रक्त कैंसर में, अत्यार्तव, स्तन एवं मूत्राशय कैन्सर के उपचार में लाभदायक हैं। इसकी पत्तियों का प्रयोग मधुमेह

नाशक के रूप में करते हैं। लाल सदाबहार में उच्च रक्त दाब करने वाला गुण पाया जाता हैं।

सर्पगंधा

एपोसायनासे कुल के इस सुन्दर चिकने गुल्म का वानस्पतिक नाम **राउवॉल्फिआ सर्पेन्टीना** हैं। यह पागलपन को दूर करने वाली औषधियों में से एक हैं। हमारे देश के पांरपरिक चिकित्सकों में छोटी चांदड के नाम से यह लोकप्रिय पौधा मिरगी, उन्माद, हिस्टीरया, रक्तदाब व अनिद्रा की अचूक दवा हैं। इसकी जड़ में सर्पेन्टिनीन व रॉओल्फीन आदि मुख्य घटक पाये जाते हैं। इसकी जड़ का चूर्ण एवं पत्तियों का चूर्ण मधुमेहनाशिनी के रूप में प्रयुक्त होता हैं।

सैंधना (सहजन)

मोरिंगासे कुल के इस वनस्पति संपदा का वानस्पतिक नाम **मोरिंगा ओलीईफेरा** हैं। सहजन के छोटे–छोटे मध्यम कद के वृक्ष होते हैं। इसका काष्ठ भी कोमल होता हैं। इसकी फलियाँ पकने पर हल्के भूरे रंग की होती हैं। इनका प्रयोग शाक–सब्जियों में किया जाता हैं। इसके जड़ में टेरिगोस्पर्मिन नामक जीवाणुनाशी तत्व पाया जाता हैं। इसके फलियों का शाक स्वादिष्ट, मधुमेहनाशक, रक्त शोधक व उदररोग–नाशक होता हैं।

सुगंधबाला

वालेरिआनासे कुल के इस शाकीय पौधे का वानस्पतिक नाम **वालेरिआना जटामांसी** हैं। तगर की लकड़ी के नाम से विख्यात इस पौधे के तेल में सेस्क्विटर्पीन, वैलेरिक एसिड़ तथा फैटी एसिड्स भी पाए जाते हैं। इसके अतिरिक्त एरेकेडिक एसिड़ तथा फैटी एसिड्स भी पाये जाते हैं। इसके भोमिक काण्ड (राइजोम) पीले–भूरे रंग के, गाँठदार तथा रूपरेखा में बेलनाकार होते हैं। इसकी पत्तियाँ त्रिदोषहर, यकृदुत्तेजक, श्वासहर, मधुमेह नाशक तथा कुष्ठहर हैं। इसकी पत्तियों को पानी में भिगोंकर सेवन करने से रक्त शर्करा में कमी होती हैं।

हल्दी

जिंजिबरासे कुल के इस पौधे का वानस्पतिक नाम **कुर्कूमा डोमेस्टिका** हैं। हल्दी का पौधा वार्षिक होता हैं। इसका गांठदार भूमिगत तना जो प्रकन्द के रूप में होता हैं, साल दर साल जीवित रहता हैं। हल्दी में मौजूद रासायनिक संघटक करक्यूमिन तथा फेरूलोयन को शोथरोधी (एन्टी इन्फ्लामेट्री) होने का गुण प्राप्त हैं। करक्यूमिन ऑक्सीकारक तत्वों को भी समाप्त करता हैं। हल्दी में एक विशेष प्रकार का स्टार्च अराबाईनोगलेक्टेस पॉलीसैकेराइड्स पाया जाता है जो श्वेत रुधिरकणिकाओं को बल देता है तथा प्रतिरक्षा तंत्र को शक्ति प्रदान करता हैं। अलजाइमर रोग की रोकथाम में भी काफी उपयोगी सिद्ध हुई हैं। यह मधुमेह तथा कैंसर जैसी व्याधियों के निदान में कारगर सिद्ध हुई हैं।

हरड़

कॉम्ब्रेटासे कुल के इस पौधे का वानस्पतिक नाम **टर्मिनालिआ चेबूला** हैं। इस मध्यमकारी वृक्ष की छाल बादामी रंग की होती हैं। इसके छोटे–छोटे

फल में टैनिक अम्ल, गैलिक अम्ल, चेबुलिनिक अम्ल, फास्फोरिक अम्ल पाया जाता हैं। विभिन्न आयुर्वेदीय ग्रंथों में इस हरीतकी, फल को माँता की संज्ञा दी गयी हैं। त्रिफला के मिश्रण में इसका प्रयोज्य होता हैं। इसका उपयोग कोष्ठबद्धता, नेत्रविकार, मधुमेह नाशक, मुखगत व्रण, भगंदर तथा प्रवाहिका में किया जाता हैं। इसके फल का प्रयोग सुपाड़ी की भाँति करने से रक्तशर्करा में कमी आती हैं।

केमुका

स्किटामिनासे कुल के इस पौधे का वानस्पतिक नाम **कॉस्टस सिपओसस** हैं। इसके पत्र तथा मूल कंद में टिगोजेनिन, डायोसजेनिन ऐल्कलॉरड पाए जाते हैं। इसके कंद खाद्य पदार्थ के रूप में प्रयोग होते हैं। इसके मूल स्तंभ का चूर्ण कटु तथा रिक्त होता है जो कुष्ठनाशक, मधुमेहनाशक तथा वातज प्रमेह में लाभप्रद हैं। कर्णशूल में वनस्पति को उबालकर उसके स्वरस का उपयोग कान में डालने से लाभ होता हैं।

चमेली

ओलियासे कुल की इस आरोही लता का वानस्पतिक नाम **जैस्मेनियम ग्रांडिफ्लोरम** हैं। इसके फूलों तथा पत्तियों में युजीनॉल, जैस्मीनाईन, मिरसीन तथा एस्कार्बिक अम्ल पाया जाता हैं। इसकी पत्तियों का रस मधुमेह रोगियों के घाव को भरने तथा कान के दर्द में लाभकारी हैं।

○○○

9

मरु क्षेत्र के औषधीय पौधे

एन. के. बोहरा

मरु क्षेत्र अनेक जीवों का प्राकृतिक आवास रहा है। उष्ण वर्षा वन के पश्चात् यहाँ पर सर्वाधिक पादप एवं जीव प्रजातियाँ पाई जाती हैं। मरु क्षेत्र के पादप अधिकांशतः अन्य बायोम के पौधों से पृथक् दिखते हैं। मरु क्षेत्र में अनेक औषधीय एवं आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण पादप मिलते हैं। क्षेत्र की आर्थिक उन्नति के मद्देनज़र आवश्यक है कि वैज्ञानिक प्रबंधन एवं दोहन द्वारा इन औषधीय पौधों की जानकारी ज्ञात की जाए। अध्ययन से प्राप्त आकड़ों के अनुसार 1952 से अब तक इस गर्म भारतीय शुष्क क्षेत्र में 775 जातियाँ एवं 48 उपजातियाँ हैं जो 384 जेनेरा एवं 90 कुलों से संबंध रखती हैं तथा आवृतबीजी पादपों की श्रेणी के तहत आती हैं। इसमें 85 प्रतिशत से अधिक द्विबीजपत्री एवं 15 प्रतिशत एक बीजपत्री पादपों की श्रेणी में आती हैं। अधिकांशतः बाहरी जातियाँ काष्ठीय थीं। पादप भौगोलिक आँकड़ों में 37 प्रतिशत पादप जातियाँ अफ्रीका तत्व की, 20 प्रतिशत ओरिएन्टल तत्व, 14 प्रतिशत उष्णकटिबंधीय 9. 4 प्रतिशत, जातियाँ स्थानीय थीं। इसके साथ ही बड़ी संख्या में जातियों में बहुरूपता देखी गई जो मुख्यतः झाड़ी पादपों में अधिक थी।

मरु क्षेत्र की लगभग 157 पादप जातियों के औषधीय गुण ज्ञात किए जा चुके हैं तथा अनेक के बारे में जानकारी ज्ञात करना शेष है। मरु क्षेत्र के पारिस्थितिक तंत्र में पादप विभिन्नता का बहुत अधिक महत्व है। मरु क्षेत्र में पाए जाने वाले औषधीय पौधे मुख्य रूप से निम्न कुलों से संबंध रखते हैं : सोलोनेसी (9), एसइलपिडेसी (7), मालवेसी (7), पेपिलियोनेसी (7), अकेन्थेसी (6), ऐमेरेन्थेसी (6), एस्टरेसी (6), यूफॉर्बिएसी (6) एवं कॉनवॉलवुलेसी (5) राजस्थान में पाए जाने वाले जिन विभिन्न औषधीय पौधों का कृषीकरण किया जा सकता है, उनके बारे में जानकारी इस प्रकार हैं।

ऐमब्लिका ऑफिसिनेलिस (आंवला) – यह मध्यप्रदेश एवं हिमाचल प्रदेश के पर्णपाती वनों

में बहुतायत से मिलता है। इसका कृषिकरण उत्तरप्रदेश, बिहार, हिमाचल प्रदेश, मध्यप्रदेश, राज़स्थान, हरियाणा, पंजाब एवं जम्मू कश्मीर में किया जाता हैं। यह एक छोटे से मध्यम आकार की औसतन 5–6 मी. ऊँचाई वाला पर्णपाती वृक्ष है। इसके कृषिकरण हेतु बनारसी, चकैया, फ्रांसिस, एन.ए. –4 (कृष्णा), एन.ए.–5 (कंचन), एन.ए.–6, एन.ए.–7 एन.ए.–10 एवं वी.एस.आर–1 (भवानीसागर) आंवला को हल्की तथा भारी मिट्टी में उगाया जा सकता है, परंतु रेतीली मिट्टी में नहीं। कंकड–युक्त मिट्टी एवं चट्टानी स्थानों पर भी यह हो सकता है। परंतु उचित निकासी वाली उपजाऊ दुमट मिट्टी में इसकी अधिक पैदावार होती है। इसके कृषिकरण के लिए 7 से 9.5 P.H. उचित रहता है। वार्षिक 630–800 मिमी वर्षा वाले क्षेत्रों में इसकी अच्छी पैदावार होती है। इसे बीजों को कायिक तरीकों से उगाया जा सकता है। "शील्ड बडिंग" इसके प्रायोगिक एवं व्यापारिक उपयोग हेतु उचित रहती है। "शील्ड बडिंग" में एक वर्षीय पादप पर उत्कृष्ट गुणों वाले एवं बड़े आकार के फल देने वाली किस्म की कटिंग से "बडिंग" की जाती है। इस हेतु ऐसी कलम का प्रयोग करना चाहिए जिसमें मादा पुष्प अधिक संख्या में हों। वनों में जंगली आंवलों की औसत उत्पादकता 25 किलो (लगभग) होती है। एक परिपक्व वृक्ष 10 वर्षो में 50–70 किलोग्राम फल दे सकता है। फल का औसत भार 60–70 ग्राम होता है। आठ वर्षीय पादपों से 1 हैक्टेयर में 20–25 टन फल प्राप्त हो सकते हैं।

ओसियम सैक्टम (लिनियस), (तुलसी)– तुलसी या पवित्र बेसिल एक बहुवर्षीय झाड़ी है जो लेमिएसी कुल से संबंध रखती है। इसे लगभग हर प्रकार की मिट्टी में उगाया जा सकता है परंतु क्षारीय, जलप्लावित भूमि में नहीं। इसकी उचित वृद्धि "लोमी" या रेतीली मृदा में जिसका P.H. 5–8. 5 तक हो, होती है। इसे बीजों या कायिक रूप से कलमों द्वारा उगाया जा सकता है। रोपण हेतु 15–20 सेमी. ऊँचाई के पौधे उचित रहते हैं। इन्हें 40×40 दूरी पर पंक्तिबद्ध रोपित किया जाता है। पौधरोपण के पश्चात् एक माह तक प्रत्येक सप्ताह सिंचाई करने से पौधे अपने आप को स्थिर कर सकते हैं।

इसके पश्चात् 15–20 दिन के अंतराल में वर्षा होने की स्थिति एवं मृदा में नमी के अनुसार पानी देना चाहिए। फसल को 60–80 दिन पश्चात् जब वह पूर्ण विकसित अवस्था में हो, काटा जाता है तथा इसे जमीन से 15–20 सेमी. ऊँचाई छोड़कर काटा जाता है जिससे अच्छा पुनर्जन्म हो सके। फसल को सुनहरा पीला से हरा होने पर काटा जाता है। अधिक तेल इसी समय प्राप्त होता है। औसतन तुलसी से 10,000 से 15,000 किलो ताजा पत्ते प्रति हेक्टेयर प्रति वर्ष प्राप्त हो सकते हैं। झाड़ी में 0.1 से 0.23 प्रतिशत तक तेल प्राप्त होता है तथा 10 से 23 लिटर तेल प्रति हेक्टेयर में प्राप्त हो सकता है।

फाइलैंथस ऐमेरस (भुई आंवला):– यह पादप पूरे मानसूनी मौसम में पूर्ण भारतवर्ष में पाया जाता है तथा इसकी माँग की आपूर्ति मुख्यतः वनों सें प्राप्त होती है। इसका व्यापारिक रूप से भी दोहन किया जा सकता है। सीमैप, लखनऊ द्वारा इसकी एक किस्म "नवयाकृत" को कृषिकरण हेतु चिह्नित किया गया है। इसका कृषिकरण बीजों द्वारा किया जाता है। जिन्हें उचित ढंग से नर्सरी में तैयार किया जाता है। 30–40 दिन पुराने पौधोंको, जो 10–15 सेमी. लंबे हों, 15×10 सेमी. के अंतराल पर रोपित किया जाता है। फसल तीन माह बाद कटाई के लिए तैयार हो जाती है तथा इसे वर्षा ऋतु समाप्त होने के पश्चात् काटा जाता है। इसका वार्षिक औसत उत्पादन 2000 किलो प्रति हेक्टेयर तक होता है तथा इसका बाजार मूल्य 20 रु प्रति किलो है।

प्लान्टेगो ओवेटा (ईसबगोल):– इसे बीजों से उगाया जाता है। इसकी अनेक किस्में यथा गुजरात–1, गुजरात–2, टी.एस. 1–10, ईसी–124345, नीहारिका, हरियाणा ईसबगोल–5 एवं जवाहर ईसबगोल–4 ज्ञात की गई है। यह सीमांत भूमि पर अच्छी तरह उगता है। ऐसी रेतीली या दुमट मिट्टी जिसका P.H. 7–8 हो तथा उचित जल निकासी का प्रबंध हो, वहाँ यह अच्छी तरह उगता है। इसकी कृषि हेतु 15–20 टन फार्मयार्ड मैन्योर/हेक्टेयर मिट्टी में मिलाकर जमीन को तैयार करते हैं। इसी प्रकार नाइट्रोजन 50 किलोग्राम, फास्फोरस 25 किलोग्राम एवं पोटाश खाद 30 किलो हेक्टेयर डालने पर अच्छी उत्पादकता प्राप्त होती है। नाइट्रोजन को छोटे–छोटे टुकड़ों में एक माह के अंतर से डालना चाहिए। इसके बीज छोटे एवं हल्के होते हैं अतः इनका छिडकाव कर, मिट्टी की हल्की परत इन पर बिछानी चाहिए। इसके पश्चात् हल्की सिंचाई उपयुक्त रहती है। सिंचाई एक माह बाद पुष्प उगने पर एवं बीज विकास के दौरान भी करनी चाहिए। इस फसल को 4–7 सिंचाई की आवश्यकता होती है। इसकी फसल में "डाऊनी मिलड्यू" मुख्य रोग लगता है जिसका कारक पेरोनोस्पोरा प्लेन्टीजीनिस एवं पेरीनोस्पोरा एलाटा है। यह रोग पुष्पक्रम बनते समय होता है तथा पत्तियों पर इसके लक्षण छोटे–छोटे चकत्तों में दीखते हैं जो बाद में पूर्णतः फैलकर पौधे को नष्ट कर देते हैं। इसके उपचार हेतु पोरडेक्स मिश्रण या कॉपर ऑक्सी क्लोराइड, डाइथेन एम–45 या डाइथेन जेड–78 का प्रयोग 2–2.5 ग्राम/लिटर करना चाहिए। इसी प्रकार लक्षण दिखते ही बेविस्टीन का 0.1 प्रतिशत छिड़काव हर 15 दिन पर करना चाहिए। यह 4–5 माह की फसल है। पत्तियों के पीला पड़ने पर इसे जमीन से कुछ ऊपर काटना चाहिए। पौधों को साफ कर छलनी से छानकर बीज प्राप्त किए जाते हैं। बीजों का उत्पादन 500–1500 किग्रा/हेक्टेयर तथा हस्क का उत्पादन 225–375 किग्रा. हेक्टेयर तक होता है।

टिनोस्पोरा कार्डीफोलिया (गिलोय):– यह पूर्ण भारतवर्ष के उष्ण कटिबंधीय पर्णपाती वनों में 900 मी. से ऊपरी क्षेत्रों में तथा दक्षिण में श्रीलंका एवं अंडमान तक मिलता है। यह एक "बेल" है जो वृक्षों पर तेजी से फैलती है। इसे बीजों या कायिक कलमों से तैयार किया जाता है। तने की कलमों से 9 इंच लंबी एवं 1 सेमी. मोटी 4–8 संधियुक्त

कलमों को पॉलीबैग में सुखाकर रोपते हैं। से जून–जुलाई में मिट्टी में 1–2 संधि तक उगाकर रोपित करते हैं। इस प्रकार रोपित कलमों में 20–30 दिनों में जड़ें तैयार हो जाती हैं। अप्रैल में पत्तियों के गिरने पर इसकी कटाई करते हैं। तने को जमीन पर एक फुट तक छोड़कर काट लेते हैं जो बाद में पुनः अंकुरित हो जाते हैं। इसकी पत्तियाँ आर्थिक रूप से उपयोगी होती हैं। पहली कटाई पौध–रोपण के 3–4 माह बाद एवं फिर 2 माह की जाती है। इस प्रकार 10–20 क्विंटल सूखा तना एवं 5000 किग्रा सूखी पत्तियाँ प्रति हेक्टेयर प्राप्त हो सकती हैं जिसका बाजार भाव 15–20 रुपये किलो है।

विथैनिया सोमनीफेरा (अश्वगंधा):– इसे कई शताब्दियों से औषधि के रूप में प्रयुक्त किया जाता रहा है। इसका व्यापक रूप से कृषिकरण किया जा रहा है। यह सूखे क्षेत्रों में तथा अन्य स्थानों पर उष्ण कटिबंधीय या टेम्परेट क्षेत्रों में पाया जाता है। इसके बीजों की बुवाई, वर्षा के पश्चात् अगस्त से सितम्बर तक ही जाती है। परिवक्व होने पर पूरे पेड़ को जड़–सहित उखाड़ा जाता है। परिवक्व होने पर पत्तियाँ सूखकर लाल पीली हो जाती हैं। बुवाई के 150–180 दिन पश्चात् जनवरी–मार्च में कटाई कर 6–7 क्विंटल सूखी जड़ एवं 50–60 किलो बीज/ हेक्टेयर प्राप्त किए जा सकते हैं। इसका वर्तमान बाजार भाव 70–80 रुपये/किग्रा है। इसके बीज 50 रुपये प्रति किलोग्राम तक होते हैं।

ऐबिलोमोस्कस मोसकेटस (लता कस्तूरी):– यह कटिबंधीय गर्म नम से उपोष्ण जलवायु तक में मिलता है तथा इसे रेतीली से दुमट मिट्टी (P.H. 7.0) में उगाया जा सकता है। इसकी बीजों या कलमों में 30×30 सेमी. के अंतराल पर बुवाई की जाती है। अर्धकाष्ठीय लकड़ी बिना पत्ती वाली कलमों से 100 प्रतिशत जड़ें एवं अंकुरण प्राप्त होता है। शुरूआत में 3–4 दिन के बाद और बाद में 8–10 दिन बाद की जाती है जो मौसम पर निर्भर करती है।

बिक्सा ओरीलिआना (सिन्दूरी):– इसे बीजों या कलम द्वारा हर प्रकार की मिट्टी जिसमें उचित निकासी का प्रबंध हो उगाया जा सकता है। बीजों को पॉलीबैग या ट्रेन्च में साधारणतः अप्रैल माह में बोया जाता है जो 8–10 दिन में अंकुरित हो जाते हैं।

सिट्रूलस कोलोसिन्थिस (तुम्बा):– यह रेतीली मिट्टी में अधिक अच्छी उगता है। बीजों को नम गनी बैग में एक फुट गहराई में मिट्टी में दबाकर तथा मई–जून माह तक लगातार स्प्रिंकलर से नम बनाए रखते हैं। 3–4 दिनों बाद बीजों को बाहर निकालकर सुखा लेते हैं। अब इन बीजों का नर्सरी में सीधे बीजरोपण कर दिया जाता है। इस प्रकार तैयार पौधों को प्रायोगिक क्षेत्र में 1×5 मी. की दूरी पर जुलाई–अगस्त में लगाते हैं। इसके फल नवम्बर–दिसम्बर में तोड़े जाते हैं।

कोलियस बारबेटस (पत्थर–चूर):– इसकी खेती हेतु P.H. 5.5–7 वाली रेतीली एवं रेतीली

दुमट मिट्टी उचित रहती है। सामान्यतः इसकी खेती बीजों की अपेक्षा कलमों से अधिक उचित ढंग से की जाती है। 10–12 से.मी. तने की ऐसी कलमों को जिसमें पत्तियाँ लगी हों, नर्सरी में छायादार स्थानों पर लगाते हैं। एक माह पुरानी जड़ युक्त कलमों को खेत में जुलाई–अगस्त माह में 20×20 सेमी. की दूरी पर लगाते हैं। इसकी जड़ों को पौधरोपण के 5 माह पश्चात् काट लेते हैं।

मुकुना प्रूरिटा (केवाच):– इस हेतु उष्णकटिबंधीय से उपउष्णकटिबंधीय जलवायु एवं उचित निवास वाली रेतीली से दुमट तक मिट्टी उपयुक्त रहती है। नर्सरी तैयार करने के लिए बीजों को 24 घंटे पानी मे भिगोकर क्यारियों/पॉलीबैंग में मई–जून माह में लगाते हैं। 4–12 दिनों में पौधे अंकुरित हो जाते है। इन्हें 2 माह बाद 45×60 सेमी. दूरी पर रोपित करते हैं। बीज की लकड़ी से इसको सहारा दिया जाता है।

सोरोलिया कोरिलीफोलिया (बावची):– यह उचित निकास वाली रेतीली–मध्यम दुमट से काली कॉटन मिट्टी (P.H. 6.5 7–7.5) में शुष्क उष्ण क्षेत्रों की गर्म जलवायु में उगता है। पानी में 12–24 घंटे भिगोकर रखे बीजों को नर्सरी की क्यारियों में बसंत ऋतु में सीधे छिड़काव कर या खेत में मई–जून में लगाया जाता है। 7–12 दिनों में 60–70 अंकुरण प्राप्त हो जाता है।

कुरकुमा ऐगुंस्टीफोलिया (तीखुर):– यह राइजोम द्वारा रेतीली दुमट मिट्टी में (जिसमें उचित निकासी हो) जून–जुलाई में उगाया जाता है। राइजोम के पर्व युक्त टुकड़ों 'रिड्ज' पर 15–20 सेमी. दूरी पर मिट्टी में 5–10 सेमी. गहराई में लगाते हैं। राइजोम लगाने के तुरंत बाद सिंचाई की जाती है। फसल 7–8 माह बाद तैयार हो जाती है तथा जनवरी माह में इसे जड़ सहित उखाड़ लेते हैं।

ट्रेकीस्पर्मम ऐमी (अजवाइन):– इस हेतु हल्की दुमट से सिल्ट 'गाद' युक्त मिट्टी, जिसमें उचित निकास तंत्र हो (पी.एच.–8), उचित रहती है। इस हेतु 2–3 किग्रा/हेक्टेयर बीजों की जरूरत होती है, जिन्हें नर्सरी की क्यारियों में 20–30 सेमी. दूरी पर नवंबर माह में पंक्ति में लगाते हैं। लगाने के तुरंत बाद सिंचाई करते हैं। 100–110 दिनों के संपूर्ण फसल काल में दौरान 5–7 सिंचाई की आवश्यकता होती है।

मेट्रीकोरिया केमोमीलिया (बबुना):– इस हेतु क्षारीय मिट्टी एवं शीतोष्ण से उपोष्ण जलवायु उचित रहती है। अक्टूबर माह में मोटे एवं भारी बीजों को नर्सरी में तैयार करते हैं। 6 सप्ताह बाद पौधों को 30×30 मी. दूरी पर रोपण करते हैं। इस फसल हेतु 4–5 सिंचाई की जरूरत होती है। पुष्पन के दौरान सिंचाई की जरूरत अधिक होती है। पुष्पन फरवरी से अप्रैल तक होता है। पुष्पों को तोड़कर सुखाकर तेल निकालते हैं, जिसका आसवन कर व्यापारिक उत्पाद बनाते हैं।

साल्वेडोरा परसिका (खारा जाल):– यह उष्णकटिबंधीय जलवायु एवं रेतीली से दुमट या क्षारीय मिट्टी में भी उग सकता है। ताजा एकत्र

बीजों से बुवाई जून–जुलाई में करते हैं जो 5–10 दिनों में अंकुरित हो जाते हैं। एक माह पुराने पौधों को खेत में 2×2 मीटर की दूरी पर लगाते हैं। 4–5 वर्ष बाद इनकी छटाई करते हैं।

प्रकृति द्वारा उपलब्ध जड़ी–बूटियों का प्रयोग स्वास्थ्य–रक्षा एवं रोगो से इलाज के लिए प्राचीन काल से किया जा रहा है। बढ़ते जैविक दबाव के चलते क्षेत्र की महत्वपूर्ण वनस्पतिया लुप्त होने लगी हैं तथा अनियंत्रित दोहन व उपेक्षा से औषधीय पादपों की कई जातियाँ लुप्त हो चुकी हैं। आधुनिक युग में वनौषधियों की बढ़ती माँग के कारण कई उपयोगी/जातियों का अनियंत्रित दोहन जारी है जिसके कारण वे भी भविष्य में लुप्त हो जाएंगी।

○○○

10

कर्ण रोग : बढ़ती समस्याएँ एवं निदान

रेशमा कुमारी और प्रो. आर. सी. दुबे

कान मानव शरीर का बहुत ही संवेदनशील एवं महत्वपूर्ण अंग होता हैं। अति संवेदनशील होने के कारण यदि इन पर उचित ध्यान नहीं दिया गया तो कान से संबंधित अनेक समस्याएँ उत्पन्न हो सकती हैं। कान की समस्याएँ तथा रोग अधिकतर बरसात एवं सर्दी के महीनों में होते हैं। उपर्युक्त महीनों में प्रायः बच्चों के कानों में संक्रमण हो जाता है। फलतः बच्चों में कान में पीव (pus) का निर्माण होने लगता है। पीव निर्माण एवं उसका सतत् स्राव कान में एक गंभीर रोग का रूप धारण कर लेता है। अतः इसका शीघ्र निदान आवश्यक है। कर्णकवकता (ओटोमाइकोसिस) कानों का माइकोसिस (कवकीय) रोग है जो कि कवक के विकास अथवा वृद्धि करने से उत्पन्न होता है। इसे माइकोटिक ओटाइटिस भी कहा जाता है। यह कान के बाहरी भाग अथवा नली के पुरानी त्वचा पर अर्धजीर्ण संक्रमण के रूप में विकसित होता है। कटिबंधीय, उष्णकटिबंधीय तथा नमी–युक्त प्रदेशों में यह रोग सामान्य रूप से व्याप्त है। यह संक्रमण मनुष्य तथा जानवर दोनों को हो सकता हैं। यह संक्रमण संदूषण के कारण उत्पन्न होता है जिसके कारक कवक तथा जीवाणु दोनों हो सकते हैं। यह संक्रमण अद्र्धविकसित, घातक और भयावह होता है जिसमें बदबूदार पीव, शोथ, स्केलिंग (पर्पटीयन), तीव्र खुजली, दर्द तथा अशांति का आभास बना रहता है। अनेक प्रकार की कवक प्रजातियाँ हमारे आस–पास के वातावरण में पाई जाती हैं और आसानी से मनुष्य के संपर्क में आकर उन्हें संक्रमित करती हैं। किन्तु प्रत्येक मनुष्य इन कान के कवकों से ग्रसित नहीं होता है। वे ही मनुष्य इस संक्रमण के प्रति संवेदनशील होते हैं जिनकी व्यक्तिगत रूप से प्रतिरोधक क्षमता कमजोर होती हैं। मधुमेह जैसे बीमारियों से ग्रसित व्यक्ति इस कवक से आसानी से संक्रमित हो जाते हैं। सामान्यतः प्रारंभिक चरण में सही उपचार न होने के कारण यह बीमारी अधिक भयावह तथा घातकं रोग का रूप धारण कर सकती है। गलत

उपचार के कारण यह जीवाणु से संक्रमित हो जाता है। इस संक्रमण के मुख्य कारक *एस्परजिलस* तथा *कैंडिडा* की जातियाँ होती हैं।

कर्ण संक्रमण क्यों होता हैं?

कान में संक्रमण की समस्या मध्य कान में कवक अथवा जीवाणु के कारण होती हैं। यह समस्या वयस्कों की तुलना में बच्चों में ज्यादा होती है क्योंकि उनकी त्वचा अधिक संवेदनशील होती है। कान में संक्रमण के लिए कुछ कारण हैं खूट/वैक्स का बनना, फेटल एल्कोहल सिंड्रोम, खाद्य एलर्जी, पर्यावरण एलर्जी, आंतरिक एलर्जी आदि।

कर्ण रोगकारक

ओटोमाइकोसिस विशेष रूप से *एस्परजिलस नाइजर* तथा *एस्परजिलस फ्यूमिगेटस* कवक द्वारा उत्पन्न होता है। जापान में *एस्परजिलस टेरीयस* इस रोग का एक महत्वपूर्ण कारक है। इसके साथ–साथ *एस्कोपूलेरियोप्सिस, पॉलीपाइसिलम, म्यूकर, राइजोपस, कैंडिडा* तथा *डरमैटोफाइट्स* जातिया सामायिक रूप से रोग–वाहक होती है। कानो से केवल किसी भी कवक को पृथक करके यह नहीं कहा जा सकता कि वह रोगकारक है।

कर्णकवकता, जीवाणुज कर्णशोथ से भिन्न होती है। बाद में कान से दुर्गंध के साथ पीव स्रावित होता है कर्णशोथ में *कोरोनेबैक्टेरियम, एसरेकिया, स्यूडोमोनास, प्रोटियस, माइक्रोकोकस* अथवा *स्ट्रेप्टोकोकस* की जातियाँ भी संलग्न हो सकती है।

एस्परजिलस टेरीयस का संवर्धन एवं पहचान

एस्परजिलस टेरीयस को *एस्परजिलस टेरेस्ट्रीयस* के नाम से भी जाना जाता है। यह कवक संपूर्ण विश्व में मिट्टी में व्यापक रूप से पाया जाता है। 90 प्रतिशत कान का संक्रमण कवकों द्वारा होता है। इसे पहले अलैंगिक माना जाना था किंतु कुछ समय पूर्व इसके लैंगिक प्रजनन करने की क्षमता के बारे में ज्ञात हुआ है। यह मृतोपजीवी कवक होता है। उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में गर्मी के मौसम में यह व्यापक रूप से वृद्धि करता है। मिट्टी में स्थित होने के कारण यह धूल के साथ विसरित होकर एक स्थान से दूसरे स्थान पर आसानी से गमन करता है। कम प्रतिरक्षा वाले लोगों में यह संक्रमण कर सकता हैं।

एस्परजिलस टेरीयस हल्के भूरे रंग का होता है और संवर्ध पर उम्र के साथ गहरा हो जाता है। जापेक डॉक्स अगार (Czapek dox agar) अथवा माल्ट एक्सट्रैक्ट अगार संवर्ध में 25°c पर इनकी निवह चिकनी दीवारों के साथ द्रुत गति से वृद्धि करती हैं। कभी–कभी यह पहले रोम–गुच्छों के रूप में प्रतीत होता है।

सूक्ष्मदर्शीय संरचना

एस्परजिलस टेरीयस का केनिडियधर (कोनिडियोफोर) चिकना, रंगहीन तथा 100–250× 4–6 माइक्रोमीटर ब्यास का होता है। इसके कोनिडियम शीर्ष संधनित, द्विपंक्तिबद्ध तथा स्तंभाकार लगभग 500×30–50 माइक्रोमीटर ब्यास के होते हैं। इसकी कोनिडिया छोटी, लगभग 2 माइक्रोमीटर आकार की, चिकनी दीवारों युक्त, गोलाकार तथा रंगहीन अथवा हल्के पीले रंग की होती है। संवर्ध पर यह हल्के उभार के साथ वृद्धि करता है। 45 से 48°c तापमान पर भी अति सरलता से वृद्धि करने के कारण यह ताप–सहिष्णु कवक है। यह अन्य जैव–रोधी दवाईयों के अपेक्षाकृत एम्फोटेरिसिन–बी से प्रतिरोधित है। *एस्परजिलस* की एक प्रजाति चित्र 1 में दी गयी है।

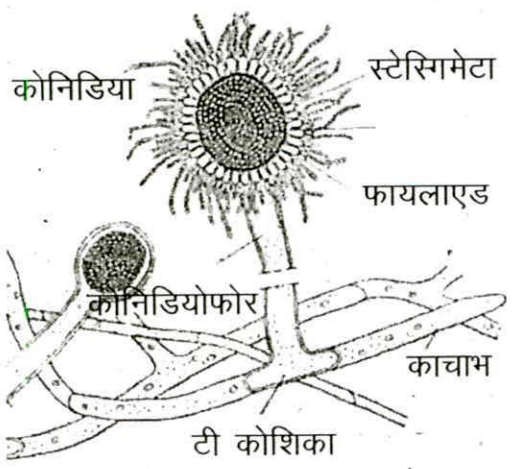

चित्र 1. एस्परजिलस की एक जाति

कैंडिडा एलविकैन्स

कैंडिडा एलविकैन्स मुख्यतः मनुष्य में रोग उत्पन्न करता है। कान में अन्य के अपेक्षा *कैंडिडा* की जाति केवल 10 प्रतिशत ही संक्रमण उत्पन्न करती है। यह मनुष्य तथा जानवरों द्वारा संदूषित मल, जल, मृदा, वायु तथा पौधों में स्थित होता है। सैबरॉड डेक्सट्रोस अगार संवर्ध पर *कैंडिडा* का निवह सफेद अथवा हल्के पीले रंग का चिकना, गोलाकार तथा यीस्ट नुमा होता है। यह आभासी काचाभ भी बनाता है। इसका प्रजनन मुकुलन (budding) के द्वारा होता हैं।

सूक्ष्मदर्शी संरचना

सूक्ष्मदर्शी से देखने पर *कैंडिडा एलविकैंस* गोलाकार से अर्धगोलाकार, यीस्टनुमा बडिंग कोशिकाएं दिखाई देती है। ब्लास्टोकोनिडिया आकार में 2.0–7.0×3.0–8.5 माइक्रो–मीटर होता है। ब्लास्टोकोनिडिया के साथ आभासी काचाभ तथा (hyphae) शीर्षस्थ पुटिकाएं (vesicles) होती हैं। *कैंडिडा* का आभासी काचाभ चित्र 2 में दिया गया है।

चित्र 2. कैंडिडा का आभासी काचाभ।

कर्ण–रोगकारक विज्ञान

कोई भी व्यक्ति किसी भी उम्र में कर्णकवकता कें प्रति प्रतिरक्षित नहीं होता है। वातावरण में इससे संबंधित वाहक हर स्थान पर विद्यमान होते है। यह रोग पूरे विश्व में विशेष रूप से नम तथा गर्म वातावरण वाले क्षेत्र में होता है। इसके विपरीत *ओटाइटिस इसटरना* जीवाणु द्वारा होता है तथा यह तैराकों में अधिक होता है।

कर्ण–संक्रमण के संप्रेषक तथा कारक

कर्णकवकता तथा कर्ण संक्रमण के अनेक कारक हैं, जैसे संदूषित जल, मृदा, वायु तथा लंबे समय तक जीवाणुरोधी औषधियों का उपयोग।

कर्ण रोग के लक्षण

कर्ण रोग के निम्नलिखित लक्षण होते है :

• एक घंटे से ज्यादा कान में दर्द के साथ सर दर्द तथा बुखार होना।

• कानो से गाढे काले, सफेद या पीले रंगों के पीब का स्राव होना।

• कान के बाह्य हिस्से पर लाली, खुजली, शोथ तथा सूजन का होना।

• प्रभावित कान में परेशानी, कानों में भरा या बंद होने की तरह अनुभव होना।

• कान का बाह्य छिद्र का छोटा दिखाई देना।

• कम सुनाई देना।

कर्ण रोग की नैदानिकी –

इस रोग को केवल कवक तथा जीवाणुज संक्रमण परिपूर्ण नहीं करता है। साधारणतया कर्णकवकता लक्षण कान के उपकला–शोथ, प्रचंड खुजली तथा शल्कस्खलन लक्षण द्वारा प्रकट होता है। जब कानों की झिल्ली फुई–प्लग, कर्णमल तथा उपकला अवशेष द्वारा अवरोधित होती है, तब इसके परिणाम स्वरूप आंशिक बहरेपन का संभावित आभास होने लगता है। उपास्थि ऊतक तथा पर्पटीकरण से ऊपर की त्वचा का शोथ कान की झिल्ली के आंतरिक भाग पर बढ़कर दर्द का कारण बनता है। मध्य कर्ण झिल्ली का भेदन कभी–कभी ही होता है।

फुई प्लग तथा पर्पटी का सूक्ष्मदर्शी द्वारा अवलोकन करने के बाद ही कवकरोधी तथा जीवाणुज–रोधी औषधि से उपचारित करने के लिए निश्चय करना चाहिए।

कर्ण पूर्वानुमान

एक बार जब किसी व्यक्ति की कवकरोधी–चिकित्सा प्रारंभ होती है तो सामान्यतया वह व्यक्ति रोगक्षम अनुक्रिया उत्पन्न करने में असक्षम होने लगता है जिसके कारण उस व्यक्ति की व्यक्तिगत रूप से अन्य रोगों से संक्रमित होने की संभावनाएं बढ़ जाती है जब तक की वह अपने पूर्व रोग से निजात नहीं पा लेता तथा उसकी बाह्य कर्ण भाग के सामान्य शरीरवृत्तिक वातावरण में किसी प्रकार की कोई परेशानी न हो। रुई से कानों की सफाई करने के कारण इस संक्रमण की संभावना और अधिक बढ़ जाती है। मात्रा से अधिक नमी तथा उपयुक्त उपचार में विलंब के कारण रोगमुक्त होने में अधिक समय लग सकता है।

कर्णकवकता अथवा कर्ण रोग के निदान के लिए जाँच

कर्णकवकता अथवा कर्ण–रोग निदान के लिए पूर्ण रूप से समस्त परीक्षण आवश्यक है। संक्रमण के कारण कान से स्रावित होने वाले पीव का सूक्ष्मदर्शी द्वारा परीक्षण कराना अति आवश्यक है जिससे किस प्रकार के सूक्ष्मजीवी संक्रमण की उपस्थिति है इसका पता लगाया जा सकें।

कर्ण चिकित्सा

सामान्यतया कर्णकवकता अत्यंत घातक और पुराना रोग है। इसके उपचार के बाद भी पुनः रोग उत्पन्न हो जाता है। इसलिए प्रभावित कर्ण क्षेत्र को सदैव साफ रखना चाहिए अन्यथा बाद में जीवाणु द्वारा निवह उत्पन्न हो जाता है। कान के साफ करने के संदर्भ में कर्ण सक्शन (चूषण) का भी इस्तेमाल किया जा सकता है। कर्ण नली की सफाई एक सप्ताह में कई बार करना चाहिए तथा सफाई करते समय दर्द निवारक दवाइयों का भी उपयोग किया जा सकता है। स्वतः कान की सफाई माचिस की तिल्ली अथवा किसी अन्य नुकीलीदार वस्तुओं से करने पर कुछ अन्य समस्याएं उत्पन्न हो सकती हैं। इसलिए संक्रमण की अवस्था में हमेशा विशेषज्ञों का परामर्श अति आवश्यक होता है। तैरना त्याग देने के बाद ही इस बीमारी के संक्रमण को पूर्ण रूप से उपचारित किया जा सकता हैं।

कर्णकवकता का आसानी से इलाज़ किया जा सकता है, किंतु मधुमेंह, कैंसर तथा एड्स आदि बीमारियों से ग्रसित कुछ लोगों में रोग–प्रतिरोधक क्षमता के कमजोर होने के कारण इसके संक्रमण की संभावना अधिक होती है। विशेषतया कम अथवा अधिक आयु वर्ग के लोगों में यह संक्रमण बाहरी कान के साथ आंतरिक कान से होते हुए खोपड़ी की आधार–हड्डी तक पहुँच जाता है। ऐसी परिस्थिति में रोगी को चिकित्सालय में भर्ती कराना आवश्यक हो जाता है।

निम्नलिखित विधि द्वारा कर्ण रोग का उपचार किया जाता है :

• हाइड्रोजन परऑक्साइड द्वारा

कर्ण रोग के उपचार के लिए केवल 2% हाइड्रोजन परऑक्साइड का उपयोग करते है। यह हाइड्रोजन आयन की सांद्रता को कम कर संक्रमण स्थान पर उपस्थित शुष्क पपड़ी को नमी प्रदान करता है। सह सर्वक्षेष्ठ प्रभाव के लिए कान के आवश्यक भागों अथवा नली तक पहुँचकर कवकरोधी तथा अम्लीय वातावरण उत्पन्न करता है जिससे कवकों की वृद्धि रुक जाती है एवं उनकी क्रियाविधि अक्रिय हो जाती हैं।

• एलुमिनम ऐसीटेट द्वारा

कान की नली अथवा झिल्ली को अच्छी तरह से 5 एलुमिनम ऐसीटेट के घोल से साफ करने का प्रयास करना चाहिए। यह त्वचा के शोथ को कम करता है तथा कर्णमल और कानों में उपस्थित कर्णमल और उपकला अवशेष को भी हटाता है

• सिरका तथा ऐल्कोहॉल के घोल द्वारा

ऐल्कोहॉल का उपयोग केवल कानों के नमी को ही वाष्पित नहीं करता है, अपितु त्वचा को रोगाणुओं से मुक्त करता है। सिरके में उपस्थित अम्ल भी कानों में कवक के विकास को भी रोकता है। घर पर ही सिरका तथा ऐल्कोहॉल का बराबर मात्रा में घोल तैयार करके प्रभावित स्थान पर

उपयोग करने से कर्णकवकता के प्रारंभिक चरण को अवरुद्ध करने में सहायता मिल सकती है।

• कवक–रोधी दवाइयों द्वारा

कान की समुचित सफाई के बाद केटॉकोनाजोल, इकोनाजोल या क्लोट्रिमाजोल जैसे कवक–रोधी दवाइयों की बूंद रोगी के कान में डालनी चाहिए। कुछ विशेष परिस्थितियों में कान के कवको के लिए जेन्शियन बैंगनी अथवा थिमेरोसॉल के घोल की बूंदे वैकल्पिक समाधान के रूप में निर्धारित की जा सकती है। प्रारंभिक तथा मिश्रित जीवाणुज कर्णशोथ की अवस्था में नियोमाइसिन, बैसीट्रेसीन, क्लोरोमाइसिटिन अथवा जीवाणुरोधी मलहम का उपयोग करना चाहिए।

• मौखिक कवक रोधी दवाइयाँ केवल गंभीर मामलों में ही दी जाती हैं। मौखिक दवा के रूप में फ्लूकोनाजोल या केटोकोनाजोल ले सकते हैं परंतु प्रत्येक व्यक्ति इस दवा का सेवन नहीं कर सकता है – विशेष रूप से वह व्यक्ति जो यकृत रोग से ग्रसित हो।

• अन्य रसायनों के द्वारा

कर्ण रोग के उपचार के लिए 70 प्रतिशत ऐलकोहॉल, 0.02–0.1 प्रतिशत फेनिल मरक्यूरिक ऐसीटेट के शुद्ध घोल, मेटाक्रीसाइल एसिटेट में 1 प्रतिशत थाइमॉल का उपयोग करने की भी सलाह दी जाती है।

कर्ण रोग के लिए कुछ घरेलू जड़ी–बूटियाँ और आयुर्वेदिक उपचारः

• शुष्क ऊष्मा नमी युक्त वातावरण में कवक के संक्रमण के बारे में पहले बताया जा चुका हैं। कानों को शुष्क अवस्था में रखना अति आवश्यक है। कानों को शुष्क रखने के लिए बालों को सुखाने वाले यंत्र का सावधानी पूर्वक उपयोग करना चाहिए। रुई की फरेरी (cotton plug) का उपयोग नहीं करना चाहिए क्योंकि यह कान में खरोच कर पुनः संक्रमण उत्पन्न कर सकती है।

• **सरसों को तेलः** कान में हर दो महीने में एक बार गरम सरसों को तेल अवश्य डालना चाहिए। तेल डालने से कान में बनने वाले अतिरिक्त मोंम नहीं बनता है।

• **सिरकाः** सिरका में पानी मिलाकर गर्म कर कान में डालने से कवक की वृद्धि अवरुद्ध हो जाती है।

• **जैतून का तेल तथा लहसुनः** जैतून के तेल में लहसुन कुचल कर डालने से कवक की वृद्धि कम होने के साथ–साथ ही दर्द भी कम हो जाता है।

• **बेलः** कान के रोग के उपचार के लिए बेल की जड़ को नीम के तेल में डुबाकर जलाने के बाद रिस कर गिरने वाले तेल की बूँदों को सीधे कान में डाल देंना चाहिए। इससे कान के दर्द और संक्रमण से मुक्ति मिलती है।

• **नीमः** नीम में पूतिरोधी (एंटि सेप्टिक) गुण होते हैं, जो कान में विकार उत्पन्न करने वाले तत्वों को नष्ट करने में सक्षम होते हैं।

• **तुलसीः** तुलसी का रस गुनगुना करने कान में डालने से भी कान के रोगों के उपचार में अधिक सहायता मिलती हैं।

• **नींबूः** अदरक के रस में नींबू का रस मिलाकर चार–पाँच बूंदे कान में डालने से आराम मिलता है। आधे घंटे के बाद रूई से कान को साफ कर देना चाहिए। तत्पश्चात् सरसों का तेल गुनगुना करके कान में डालने से आराम मिलता है।

• **तिल के तेलः** तिल के तेल में तली हुई लौंग की कुछ बूंदे भी कान के दर्द में आराम पहुँचाती हैं।

• **अदरक तथा प्याजः** अदरक और प्याज के रसों के प्रयोग से कान के दर्द में काफी आराम मिलता है।

• **मेथीः** मेथी को गाय के दूध में मिलाकर उसकी कुछ बूंदे संक्रमित कान में डालने से भी काफी राहत मिलती हैं।

• **नमकः** एक कप नमक को पाँच मिनट तक गर्म करें, इसे एक मोटे कपड़े पर डालें और खुले हिस्से को रबड़ बैंड से कसकर बांध दें। इसे बैठ जाने दें और कान के पास के क्षेत्र पर रखें। यह तत्काल आराम पहुँचाएगा। नमक के स्थान पर चावल का भी उपयोग किया जा सकता है।

• **आम की पत्ती का रसः** दो–तीन पत्तों को लेकर, अच्छी तरह से पीसकर, इससे रस निकाल कर संक्रमित कान में कुछ बूंदें डालें। अच्छे परिणाम के लिए एक दिन में अधिक से अधिक दो बार इसका प्रयोग करना चाहिए।

कर्ण रोगोपचार के समय खान–पान संबंधी सावधानियाँ

• कान की समस्या वाले रोगी को ऐसे खान–पान से बचना चाहिए जो कि कफ दोष को उग्र करते हैं।

• खट्टे पदार्थों का, जैसे खट्टा दही और खट्टे फलों के सेवन से भी कफ का दोष बढ़ सकता है।

• तरबूज, केले, संतरे और पपीतो के सेवन से बचना चाहिए क्योंकि इससे सर्दी बढ़ सकती है, जो कान की समस्याओं को बढ़ावा दे सकती है।

• कान की समस्याओं के समय प्याज, अदरक और लहसुन का प्रयोग लाभकारी सिद्ध होता है। हल्दी भी अत्यधिक गुणकारी होती है और इसे खान–पान में मसाले की तरह प्रयोग करना चाहिए।

• संक्रमित कानो को गंदे जल के संपर्क से दूर रखना चाहिए।

अब ये जादुई पेन पकड़वाएगा अपराधियों को:

अब एक ऐसा अनोखा पेन आ चुका है जिसकी पकड़ से अपराधी भाग नहीं सकते। यह पेन अपराध के दौरान अपराधी द्वारा किसी चीज़ पर अपनी उंगलियों के निशान छोड़ने पर उनकी पहचान कर लेता हैं।

इस अनोखे पेन को मैजिक पेन के नाम से लेस्टर यूनिवर्सिटी, इंग्लैन्ड के अपराध विज्ञान–विशेषज्ञ डॉ. जॉन बांड ने बनाया है।

इसमें सबसे खास बात है कि यह जादुई पेन पेट्रोल पंप, सुपर मार्केट, एटीएम आदि से तापप्रभावी कागज (थर्मल पेपर) पर मिलने वाली रसीदों पर दर्ज उंगलियों के निशान की पहचान करेगा। इसी सबूत के चलते अपराधियों को पकड़ा जा सकेगा।

शोधकर्ता के अनुसार जैसे ही इस मैजिक पेन का उपयोग तापप्रभावी कागज (थर्मल पेपर) पर किया जाएगा वैसे ही कागज का रंग बदल जाएगा। इसके बाद कागज पर दर्ज उंगलियों के निशानों की पहचान की जा सकेगी। यह पेन पुलिस, न्यायविज्ञानी (फोरेन्सिक) विशेषज्ञों और अपराधों की जाँच करने वालों के काफी उपयोगी माना जा रहा है। डॉ. जॉन बांड के मुताबिक, तापप्रभावी कागज पर इस चिह्नक (मार्कर) पेन से रसायन की थोड़ी सी मात्रा डालने पर उसका रंग बदल जाएगा। आदर्श साइज के चलते इस जादुई पेन को बहुत ही आसानी से जेब में रखा जा सकता है इस पेन से उंगलियों के निशानों की जांच करने पर ताप प्रभावी कागज का रंग काला हो जाता है। इसी के चलते पेन से थर्मल पेपर पर उंगलियों की पहचान बहुत जल्द की जा सकती हैं।

• इस तरह आपका हाथ ही बन सकता है स्मार्टफोन :

भला क्या ऐसा भी हो सकता है कि आपके फोन पर आने वाला कोई भी संदेश (मैसेज) ईमेल आप अपने हाथ पर ही पढ़कर उसका उत्तर दे सकें। इसके साथ ही वॉयस कॉल पर बात भी कर सकें। जी हां, अब ऐसा हो सकता है। क्योंकि एक ऐसी कलाई बैंड (रिस्ट बैंड) आ चुका है जो आपके हाथ को ऐसी टचस्क्रीन में बदलने में सक्षम है जिससे कि स्मार्टफोन और टेबलेट से किए जाने वाले सारे काम आप अपने हाथ की त्वचा पर ही कर सकते हैं।

यह अनोखी रिस्ट बैंड 'सीक्रेट ब्रेस्लेट' नाम से आई है। लगभग 6 महीनों की कड़ी मेहनत से बनाई गई यह रिस्ट बैंड एक प्रक्षेपित्र तथा संलग्न अन्य युक्तियों के माध्यम से यह कमाल करती है, जिससे आपके हाथ की त्वचा स्वतः टचस्क्रीन में बदल जाती है।

रिस्ट बैंड के सक्रिय करने के बाद इसे पहनने वाले व्यक्ति के हाथ पर एक टचस्क्रीन बन जाता है। सीक्रेट ब्रेस्लेट रिस्ट बैंड वाई–फाई, ब्लूटूथ तथा माइक्रो यूएस बी के जरिए ऐन्ड्रामड स्मार्टफोन और टेबलेट से कनेक्ट हो जाती है। फिर उपयोग कर्ता के स्मार्टफोन अथवा टेबलेट पर आने वाले किसी भी संदेश, ईमेल अथवा फोन कॉल की हर जानकारी उपयोगकर्ता अपने हाथ पर ही देख सकता है। इतना ही नहीं बल्कि अपनी उंगलियों की सहायता से ई–मेल और संदेश को ऊपर–नीचे, आगे–पीछे तथा छोटा–बड़ा करके भी देख सकते हैं। इस रिस्ट बैंड को 16 जीवी और 32 जीवी आंतरिक स्मृति (इंटरनल मेमरी) के साथ लाया गया है जिसके तहत किसी भी डेटा को इसमें सुरक्षित रखा जा सकता है।

• ईथियोपिया में मिला 'आदि मानव' का जीवाश्मः

ईथियोपिया में मिला हड्डियों का यह जीवाश्म, मानव की उत्पत्ति के शोधकर्ताओं के अनुमान से भी चार लाख साल पुराना है। दावा किया जा रहा है कि यह मानव जाति की सबसे प्रारंभिक समय का जीवाश्म है। अफार प्रदेश के लीडी गेरारू अनुसंधान क्षेत्र से इस जीवाश्म को एक ईथोपियाई शोधकर्ता 'सेयूम' ने खोजा है। शोधकर्ता ने बताया है कि यह जीवाश्म मानव जाति के विकास की सबसे पहली महत्वपूर्ण कड़ी पर प्रकाश डालता है। जलवायु परिवर्तन की वजह से मनुष्यों ने पेड़ पर रहने की बजाए जमीन पर रहना और सीधे चलना शुरू किया था।

अमेरिका के लास वेगास स्थित नेवाद विश्वविद्यालय के प्रोफेसर 'ब्रायन विलमोर' कहते हैं, 1974 में मिले 31 लाख साल पुराने जीवाश्म से इस हड्डी का संबंध है। होमिनिन मानव की तरह ही खड़े होकर चलने वाली जाति थी, इसे 'लूसी' नाम दिया गया था। लूसी ऑस्ट्रेलोपिथिकस अफरेनसिस जाति का जीवाश्म था। सवाल यह है कि क्या वह बिल्कुल पहला मानव था? प्रोफेसर विनमोर कहते हैं कि हम इसी मुद्दे पर काम कर रहे हैं। पर लूसी के समय और बड़े दिमाग वाले और मानव की तरह के शारीरिक अनुपात वाले होमो इरेक्टस जाति के बीच तकरीबन बीस लाख साल का अंतर है।

होमो हैबिलिस जाति की खोपड़ी के कंप्यूटर विश्लेषण से पता चलता है कि वह इस नई खोज वाली जाति का उत्तराधिकारी रहा होगा। इस जीवाश्म (जबड़े) के काल का पता लगने से मानव विकास के एक महत्वपूर्ण सवाल का जवाब मिल जाएगा। यह पता चल जाएगा कि आखिर क्यों हमारे पूर्वज पेड़ों से उतरकर जमीन पर चलने लगे।

'साइन्स' पत्रिका में छपे एक शोध से साफ होता है कि जलवायु परिवर्तन इसकी बड़ी वजह रही होगी। उस इलाके के पेड़ों के जीवाश्म के अध्ययन से पता चलता है कि हरा भरा घना जंगल घास के मैदान में तबदील हो गया होगा।

• मंगल पर जैविक पदार्थः

अमेरिकी अंतरिक्ष एजेंसी नासा के मंगल यान क्यूरियोसिटी ने लाल ग्रह की सतह पर पहली बार जैविक अणुओं का निश्चित पता लगाया है। क्यूरियोसिटी पर मंगल ग्रह प्रतिदर्श विश्लेषण (सैंपल एनालिसिस ऐट मार्स) उपकरण समूह के लिए जिम्मेदार टीम ने यान के उतरने की जगह गेल क्रेटर में शीपबेड मडस्टोन के एक छिद्र वाले सैंपल में जैविक अणु देखे। जैविक अणुओं में मुख्य रूप से कार्बन, हाइड्रोजन एवं ऑक्सीजन के परमाणुओं से बने अणुओं के विभिन्न प्रकार होते हैं। बहरहाल, ऐसी रासायनिक अतिक्रियाओं से भी जैविक अणुओं का निर्माण हो सकता है जिसमें जीवित चीजों की संलिप्तता नहीं होती। यह स्पष्ट करने के लिए पर्याप्त सबूत नहीं हैं कि टीम द्वारा एकत्र किया गया पदार्थ प्राचीन मंगलीय जीवन से प्राप्त हुआ या यह एक गैर–जैविक प्रक्रिया थी। गैर–जैविक

स्रोतों के उदाहरण में प्राचीन मंगलीय सतहों पर पानी में रासायनिक अभिक्रियाएं शमिल हैं।

• जैसी दिखती है वैसी नहीं आकाशगंगा:

आकाशगंगा का आकार अनुमानित आंकड़ो से 50 प्रतिशत ज्यादा बड़ा है। नए शोध के परिणामों के अनुसार इसकी वक्र भुजाएं कई लहरदार तरंगों में बंटी होती हैं।

न्यूयॉर्क के रेनसेलर पॉलिटेक्निक इंस्टीट्यूट में भौतिकी के प्रोफेसर हेदी जो न्यूवर्ग की अध्यक्षता में एक अंतरर्राष्ट्रीय दल ने इस शोध को अंजाम दिया। इस दौरान स्लोअन अंकीय आकाश (डिजिटल स्काई) सर्वेक्षण के खगोलीय आंकड़ो का विश्लेषण किया गया।

न्यूबर्ग ने कहा, "संक्षेप में कहें, तो हमने पाया है कि आकाशगंगा की वक्र भुजाएं एक चपटे समतल में तारों की तश्तरी नुमा नहीं, बल्कि लहरदार होती हैं।" "ऐस्ट्रोफिजिकल" जर्नल में उन्होंने कहा, "इन आंकड़ों से हम आकाशगंगा के कुछ हिस्सों को देख सकते हैं, हमने इसे पूरे वक्र भी भुजाओं का स्वरूप मान लिया हैं।"

चीन के "नेशनल ऐस्ट्रोनॉमिकल ऑब्जर्वेटरी" के वैज्ञानिक यान सू ने कहा, "महत्वपूर्ण बात तो यह है कि निष्कर्ष के मुताबिक, वक्र भुजाओं का व्यास पहले एक लाख वर्ष माना जा रहा था, लेकिन वस्तुतः यह 1.5 लाख प्रकाश वर्ष है।"

• राजस्थानी किसान का कमाल : सिर्फ एक लिटर पानी में तैयार किया पौधा :

सीकर (राजस्थान) के किसान ने एक ऐसी तकनीक विकसित की है, जिसकी सहायता से एक लिटर पानी में ही पौधा पनप जाएगा। उनकी तकनीक को न केवल राजस्थान सरकार के जल संरक्षण विभाग ने मान्यता प्रदान की है, बल्कि देश के विख्यात कृषि वैज्ञानिक एवं हरित क्रांति के जनक डॉ. स्वामीनाथन ने भी सराहा है।

राजस्थान के इस किसान सुंडाराम वर्मा ने पंद्रह फसलों की लगभग सात सौ से अधिक जातियों का संकलन कर विस्तृत अध्ययन किया। अपने इस अध्ययन में उन्होंने मिर्च, ग्वार, चौबाई, धनिया, मेथी व काबुली चने की अच्छी किस्मों का चयन किया। इससे किसानों को अच्छी पैदावार मिली। उनके इस कार्य को दिल्ली के पूसा संस्थान ने भी मान्यता दी है। सुंडाराम अपने कृषि संबंधी शोधों के लिए प्रदेश सहित राष्ट्रीय स्तर पर अनेक पुरस्कारों से भी सम्मानित हो चुके हैं।

सुंडाराम को एक लिटर पानी में पौधों के पनपने की तकनीक को तैयार करने में दस वर्ष लग गए। हालांकि वह पिछले ढाई दशक से कृषि कार्य के सरलीकरण और कृषि–संबंधी उपकरणों में लगे हैं। उन्होंने आदर्श फसल चक्र का भी निर्माण किया जिसमें किसान तीन वर्ष में सात फसलें हासिल कर सकता है। किसान प्रति हेक्टेयर न केवल एक लाख रुपये का लाभ अर्जित कर सकता है, बल्कि पैदावार में स्थिरता के साथ जमीन की गुणवत्ता भी बनाए रख सकता हैं।

• वायु प्रदूषण को कम करें तो भारतीयों की उम्र बढ़ जाएगी :

भारत अगर हवा मानकों को पूरा करने के लिए अपने लक्ष्यों को सुधार लेता है तो 66 करोड़ लोगों की उम्र 3.2 वर्ष और बढ़ जाएगी। यह जानकारी एक महत्वपूर्ण शोध में सामने आयी है। इस शोध में कहा गया है कि भारतीय वायु गुणवत्ता मानकों को अनुकूल बनाकर 210 करोड़ साल का जीवन बचाया जा सकता हैं।

शोधकर्ताओं के दल में शिकागो, हारवर्ड और येल विश्वविद्यालयों के भारतीय मूल के शोधकर्ता शामिल थे। उन्होंने शोध में पाया कि वायु प्रदूषण का जीवन काल पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने भारत के उच्च वायु प्रदूषण को विश्व के कुछ सबसे खराब देशों की श्रेणी में रखा है।

शिकागो विश्वविद्यालय, संयुक्त राज्य अमेरिका में ऊर्जा नीति संस्थान (एनर्जी पॉलिसी इंस्टीट्यूट) के निदेशक और मुख्य शोधकर्ता मिशेल ग्रीनस्टोन ने विश्वविद्यालय की एक विज्ञप्ति में कहा, भारत का ध्यान अनिवार्य रूप से विकास की ओर है। विकास की पारंपरिक परिभाषा ने हालांकि बहुत लंबे समय तक स्वास्थ्य पर वायु प्रदूषण के पड़ने वाले प्रभावों की अनदेखी कर दी गई है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के मुताबिक, विश्व के 20 सबसे प्रदूषित शहरों में 13 शहर भारत के हैं। इन अनुमानों में दिल्ली को प्रदूषण के मामले में सबसे खराब शहर बताया गया था। दुनिया के किसी भी स्थान की तुलना में श्वसन–संबंधी गंभीर बीमारियों के कारण सबसे अधिक लोगों की मौत भारत में होती है।

हारवर्ड कैनेडी स्कूल में "एविडन्स फॉर पॉलिसी डिज़ाइन" की निदेशक और सहशोधकर्ता रोहिणी पांडेय ने कहा, है कि "वायु प्रदूषण के लिए 200 करोड़ साल से अधिक जीवन का बलिदान एक बड़ी कीमत है। भारत में यह क्षमता है कि वह कम लागत में प्रभावी तरीकों से इसमें परिवर्तन लाए, ताकि करोड़ों लोग लंबे समय तक स्वस्थ जीवन जी सकें।"

• एक मक्खी दूर कर सकती है आपकी कई बीमारियाँ :

इन्सानों को करीब 100 तरह की बीमारियां देने वाली मक्खियां कई बीमारियों को ठीक भी कर सकती हैं। जी हां, इस बात का पता हाल ही में लगा है कि इन्सानों के लिए खतरनाक साबित होने वाली मक्खी इतनी लाभदायक भी हो सकती हैं। आपकों बता दें कि मक्खी द्वारा इन्सानों को दी जाने वाली बीमारियों में से एक बीमारी भी ऐसी होती है कि इन्सान इससे अंधा भी हो सकता है, लेकिन अब वैज्ञानिकों ने मक्खियों के ऐसे जीनोम अनुक्रम (गुणसूत्रों की संरचना) का पता लगाया है जिसकी मद्द से इन्सानों की बीमारियों का उपचार किया जा सकता है।

वैज्ञानिकों ने पाया है कि मक्खियों की सबसे बड़ी खासियत यह होती है कि ये इंसानों की तरह गंदगी के संपर्क में आने से बीमार नहीं होती। उन्होंने मक्खी के इस गुण को अपनी शोध का आधार बनाया और कामयाबी भी हासिल की। यह शोध कारनेल विश्वविद्यालय में अमेरिकी वैज्ञानिकों के एक दल ने किया है। इस शोध में सामान्य

मक्खी के डीएनए की तुलना एक फल वाली मक्खी के साथ की गई। इस अध्ययन के अंतर्गत एक ऐसे सूक्ष्मजीव का पता लगाया गया है जिसके कारण मक्खियाँ गंदगी और तमाम ऐसी जगहों पर बैठने के बाद भी रोगाणुओं से मुक्त रहती हैं।

इतना ही नहीं मक्खियों के जीनोम अनुक्रम से वैज्ञानिकों ने वह विशिष्ट कोड भी ज्ञात किया जिसके कारण मक्खियों को अपशिष्ट के विघटन में मद्द मिलती है। "लंदन स्कूल ऑफ हाईजीन" के प्रोफेसर डेविड कॉनवे ने कहा है कि मक्खियों के जीनोम अनुक्रम का विश्लेषण देखना लाभप्रद है, फल वाली मक्खियों के साथ इसका तुलनात्मक अध्ययन विस्तृत रूप में किया गया है। इसके अलावा डॉक्टर जेएफ स्कॉट और उनके साथियों ने जीनोम बायोलॉजी नामक पत्रिका को बताया कि इससे मानवीय मल के निपटारे और वातावरण को बेहतर बनाने में भी मद्द मिल सकती है।

○○○

11

विज्ञान समाचार

डॉ० दीपक कोहली

• भारतीय वैज्ञानिको ने हिमालय में ढूंढी संजीवनी की बूटी :

भारतीय वैज्ञानिकों ने हिमालय के ऊपरी इलाके में एक अनोखे पौधे की खोज की है। वैज्ञानिकों का दावा है कि यह पौधा एक ऐसी औषधि के रूप में काम करता है जो हमारे प्रतिरक्षा–तंत्र (इम्यून सिस्टम) को विनियमित करता है, हमारे शरीर को पर्वतीय परिस्थितियों के अनुरूप ढ़ालने में मद्द करता है तथा हमें रेडियों सक्रियता से भी बचाता है।

यह खोज हमें सोचने पर मजबूर करती है कि क्या रामायण की कहानी में लक्ष्मण की जान बचाने वाली जिस संजीवनी बूटी का जिक्र किया गया है, वह हमें मिल गई है? **रोडिओला** नाम की यह बूटी ठंडे और ऊँचे वातावरण में मिलती हैं। लद्दाख में स्थानीय लोग इसे सोलो के नाम से जानते हैं। अब तक **रोडिओला** के उपयोगों के बारे में ज्यादा जानकारी नहीं है। स्थानीय लोग इसके पत्तों का उपयोग सब्जी के रूप में करते आए हैं।

लेह स्थित 'डिफेंस इंस्टीट्यूट ऑफ हाई ऐल्टिट्यूड रिसर्च' (डी.आई.एच.आर.) के शोधकर्ता इस पौधेके चिकित्सीय उपयोगों की खोज कर रहे हैं। यह सियाचिन जैसी कठिन परिस्थितियों में तैनात सैनिकों के लिए बहुत उपयोगी हो सकता है। संस्थान के निदेशक श्री आर.बी. श्रीवास्तव के अनुसार, **रोडिओला** में प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाना, कठिन परिस्थितिओं में शरीर की सह्यता बढ़ाना और विकिरण रक्षी क्षमताएं हैं। इसकी वजह इसमें मौजूद प्रकाशसक्रिय यौगिक (फोटोएक्टिव कंपाउंड) तथा द्वितीयक उपापचयज) हैं। डी.आई.एच.आर. के वैज्ञानिकों की यह खोज भारतीय सेना के जवानों हेतु अत्यंत लाभदायक साबित हो सकती है।

• चीन में नए पक्षी की खोजः

शोधकर्ताओं के एक अंतरराष्ट्रीय दल ने चीन में विशिष्ट आवाज वाले एक नए पक्षी की खोज की है। सिचुआन बुश फुदकी (वार्बलर) (sichuan bush

warbler) नामक इस नए पक्षी का इतने सालों तक घनी घास और वनस्पतियों की वजह से पता नहीं चल पाया।

मिशिगन स्टेट यूनिवर्सिटी, अमेरिका की प्रोफेसर ओर अनुसंधानकर्ता पामेला रासमुसेन ने कहा कि घनी झाड़ियों और चाय के बागानों में रहने की वजह से सिचुआन बुश फुदकी (वार्बलर) इतने समय तक लोगों की नजरों में नहीं आ सका। पामेला ने कहा कि हालांकि यह पक्षी पकड़ में नहीं आने वाला है, लेकिन यह मध्य चीन में आम तौर पर देखा जाता है और इसके अस्तित्व पर किसी तरह का खतरा भी नहीं है। इस नए पक्षी का करीबी संबंधी रसेट बुश फुदकी (पक्षी) है। इन दोनों फुदकियों (वार्बलर) को समान पहाड़ों पर देखा जा सकता है, जहाँ ये एक साथ रहती हैं। सिचुआन बुश फुदकी कम ऊचाई पर रहना पसंद करती हैं। एक ही पहाड़ पर रहने के साथ ये दोनों आनुवांशिक रूप से भी करीबी हैं। इस खोज को 'एवियन रिसर्च' नामक पत्रिका में प्रकाशित किया गया है।

• जहाँ जीपीएस फेल, वहाँ भी काम करेगा ड्रोन :

वैज्ञानिकों ने एक ऐसी ड्रोन पद्धति विकसित की है जिसका संचालन बिना किसी 'जीपीएस' (भूमंडलीय स्थानन प्रणाली) संकेत या बिना किसी प्रशिक्षित व्यक्ति की मंद्द के बिना किया जा सकेगा। मैक्सिकों के नेशनल इंस्टीट्यट ऑफ एस्ट्रोफिजिक्स, ऑप्टिक्स एंड इलेक्ट्रॉनिक्स" के 'जोन्स मार्टिनेज कारंजा' ने बिना किसी मद्द के उड़ने वाले इस ड्रोन को नियंत्रित करने और उसके परिचालन की परिकल्पना की।

मार्टिनेज ने एक नई पद्धति की संरचना तैयार की है। इस प्रणाली में वाहन की स्थिति और दिशा की जानकारी के लिए (भूमंडलीय स्थानन तंत्र) (ग्लोबल पोजिशनिंग सिस्टम) से निर्भरता खत्म हो जाएगी, इसके स्थान पर त्वरणमापी (एक्सलरोमीटर), घूर्णाक्षस्थापी जायरोस्कोप या कैम कॉर्डर जैसे कम खर्च वाले संवेदकों (सेन्सरों) का प्रयोग किया जा सकता है।

अनुसंधानकर्ताओं ने कहा कि मुख्य लक्ष्य जी पीएस के इस्तेमाल से बचना था, इसके स्थान पर दृश्य की जानकारी के लिए वाहन पर वीडियों कैमरा का प्रयोग कर एक एल्गोरिथ्म के जरिए ड्रोन को उड़ाते समय इससे मिलने वाली जानकारी का प्रयोग करना था। इस अनुसंधान का लक्ष्य ऐसे तंत्र के विकास का था जो बाह्य वातावरण में उड़ सके।

इन ड्रोनो का प्रयोग उन स्थानों पर किया जा सकेगा जहाँ कोई जी पी एस संकेत काम नहीं करता है और जहाँ सीमित अभिकलनात्मक (कंप्यूटेशनल) क्षमता हो। इससे जमीन से नियंत्रण करने वाले सॉफ्टवेयर का विकास भी कर लिया गया है।

• ग्रीनलैन्ड में झीलें लुप्त होने का रहस्य खुला :

ग्रीनलैन्ड में तेजी से लुप्त होती झीलों के रहस्य का वैज्ञानिकों ने पता लगा लिया है। आच्छादित ग्रीनलैन्ड की इन झीलों में कभी लबालब पानी भरा होता था लेकिन पिछले कुछ सालों में जिस तेजी से ये खाली होने लगीं उसने सबकों आश्चर्य में डाल दिया और यह चिंता भी बढ़ा दी की भविष्य में पृथ्वी पर समुद्रों का जलस्तर किस तेजी से बढ़ने का खतरा है।

अमेरिका के "मैसाच्यूसेट्स विश्वविद्यालय" के वैज्ञानिकों और अनुसंधान कर्ताओं ने गहन शोध के बाद यह दावा किया है कि उन्होंने खत्म होती इन झीलों के रहस्य का पता लगा लिया है।

वैज्ञानिकों के अनुसार झीलों के ऊपर बर्फ की लंबवत् परतें सूरज की किरणों की ऊष्मा को तेजी से संचित कर लेती हैं जिससे नीचे का पानी गर्म होकर ऊपर उठने लगता है। इससे ऊपर जमी बर्फ की परत में दरारें आने लगती हैं। दरारें आते ही नीचे का पानी तेज गति से उफनते हुए झील से बाहर निकलने लगता है और इसी क्रम में पूरी झील खाली हो जाती है।

वैज्ञानिकों की शोध–रिपोर्ट साइंस पत्रिका 'नेचर' के ताजा अंक में प्रकाशित हुई है। रिपोर्ट के अनुसार झीलों का इस तरह खाली होना पर्यावरण के लिए काफी खतरनाक है। इससे भविष्य में समुद्रों का जलस्तर तेजी से बढ़ सकता है जो तटवर्ती शहरों और उसके आस–पास बसने वाले लोगों के लिए संकट का कारण हो सकता है।

हालांकि इसमें यह भी कहा गया है कि ग्रीनलैन्ड के काफी ऊँचाई वाले क्षेत्रों में स्थित झीलों की अपेक्षा निचले इलाकों में स्थित झीलों के जललुप्त होने का खतरा ज्यादा है क्योंकि इनकी बर्फ की परतें ऊष्मा का ज्यादा संचयन करती हैं।

• सौर, बायोगैस और हाइड्रोजन मिलाकर बनेगा नया अक्षय ऊर्जा मॉडल :

अक्षय ऊर्जा स्रोतों से निर्बाध बिजली की आपूर्ति के लिए ब्रिटेन और आई आई टी विशेषज्ञ साथ मिलकर एक नए मॉडल पर काम कर रहे हैं।

जैव ईंधन और सांद्रण प्रकाश–वोल्टीय (कसनट्रेटिंग फोटो वोल्टिक) तंत्र के एकीकरण और विकास पर पहली ब्रिटिश–भारतीय प्रयोगात्मक जैव–सीपीवी परियोजना जल्द ही कोलकाता से 180 किलोमीटर दूर शांतिनिकेतन की एक बस्ती में शुरू की जाएगी।

परियोजना से जुड़ी प्रोफेसर शिवानी चौधरी ने कहा, "सौर ऊर्जा पर निर्भरता के साथ दिक्कत है कि सूरज की रोशनी चौबीसों घंटे और साल भर नहीं मिल पाती। इसलिए यह पहली बार है कि जब हरित ऊर्जा के तीनों स्रोतों का भारत में संयुक्त प्रयोग किया जाएगा। इसका पूरा मॉडल 2016 तक तैयार हो जाएगा।" प्रोफेसर चौधरी के अनुसार दिन के दौरान सौर ऊर्जा और रात के समय जैव पदार्थों के स्थानीय स्रोतों से जैव ईंधन को साथ मिलाने का विचार है। आपात आवश्यकता के लिए हाइड्रोजन का भी प्रयोग किया जाएगा।

इस ब्रिटेन–भारत अध्ययन परियोजना में रिसर्च काउन्सिल यू के और भारत का विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, नई दिल्ली सहयोग कर रहे हैं।

• बच्चों में पोषण की कमी पूरी करेंगे दूध से बने चिप्स :

दूध पीने में आनाकानी करने वाले बच्चों की मांओं के लिए अच्छी खबर है। बरेली (उ.प्र.) स्थिति भारतीय पशु अनुसंधान संस्थान (आई.वी.आर.आई.) ने दूध के बने चिप्स बनाने की तकनीक विकसित की है जिसके पश्चात् ऐसे बच्चों के शरीर में दूध से मिलने वाले पोषक तत्वों की कमी को पूरा किया जा सकेगा।

आई.वी.आर.आई. द्वारा अविष्कृत तकनीक यह की, ऐसे उत्पाद निर्माता कम्पनियों को उपलब्ध कराइ जाएगी और उम्मीद है कि आने वाले दिनों में दूध के चिप्स बिकते नजर आएंगे।

आई.वी.आर.आई के निदेशक श्री आर.के.सिंह ने बताया कि संस्थान ने दूध तथा उससे बनने वाले विभिन्न उत्पादों को लेकर अनेक शोध किए हैं। इसमें वसा निकालने के बाद बचे हुए दूध से भी कई किस्म की वस्तुएँ। सामग्रियाँ तैयार करने की विधियाँ ईजाद की हैं। इन्हें जल्द ही संबंधित निर्माता कंपनियों को उपलब्ध कराया जाएगा। उन्होंने बताया कि अन्य चिप्स की तरह दूध के चिप्स भी बाजार में पैकेट मे उपलब्ध हो सकेंगे। उन्हें व्रत में भी खाया जा सकेगा और वे अपेक्षाकृत अधिक पोषण भी देंगे। उन्होंने बताया कि संस्थान ने कम वसा वाला पनीर बनाने की विधि भी विकसित की है। यह सामान्य पनीर की तरह दिखाई देगा और उसका स्वाद भी वैसा ही होगा। श्री सिंह ने यह भी सूचित किया कि आई.वी.आर.आई.अपनी तकनीक को संबंधित कंपनियों तथा व्यवसायियों को उपलब्ध कराएगा ताकि लोगों को कम दामों में अधिक पोषक उत्पाद मिल सकें।

• आलू को सड़ने से बचाएगी नई तकनीक :

पंजाब के दोआब इलाके में किसानों के लिए आलू की बंपर फसल अक्सर उनके लिए नुकसानदेह रही है। किसानों को नुकसान से बचाने के लिए जालंधर स्थित केंद्रीय आलू शोध केंद्र ने एक ऐसी तकनीक विकसित की है जिससे आलू को न केवल सड़ने से बचाया जा सकेगा बल्कि इसे लंबे समय तक भंडारित करके भी रखा जा सकेगा।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आई सीए आर) के अधीन केंद्रीय आलू अनुसंधान केंद्र (सी पी आर एस) की तकनीक के तहत आलू को बिना खराब हुए आठ माह तक भंडारण करके रखा जा सकता है। इस तकनीक को विकसित करने वाले सी पी आर एस की प्रधान वैज्ञानिक डॉ. आशिव मेहता ने इस बारे में बताया कि आलू में लगभग 80 प्रतिशत पानी की मात्रा होती है। यही कारण है कि मिट्टी से निकालने के कुछ ही हफ्ते बाद यह खराब होना शुरू हो जाता है। अगर हम इस पानी को आलू से निकाल दें तो इसका जीवनकाल कुछ हफ्तों से बढ़कर आठ महीनें तक हो सकता है और इतने समय तक इसे भंडारित करके भी रखा जा सकता है। सी पी आर एस के दो अन्य सहयोगियो के साथ इस तकनीक को विकसित करने वाली डॉ. मेहता ने कहा कि हमने इस तकनीक का नाम आलू निर्जलन रखा है और यह पर्यावरण--अनुकूल भी है।

• भारत में प्राणियों की 176 नई प्रजातियों का पता चलाः

भारतीय प्राणि–विज्ञान सर्वेक्षण, कोलकाता ने कहा है कि पिछले साल जीव विज्ञानियों ने भारत में प्राणियों की नई 176 जातियों का पता लगाया। केंद्रीय पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय के तहत प्राणियों के वर्गीकरण के लिए काम करने वाले भारतीय प्राणिसर्वेक्षण के आधिकारक रिकार्ड के मुताबिक पिछले साल भारत में 176 नई जातियों का पता चला। इनमें 93 नए कीट–पतंगे हैं।

इस सूची में मछलियों की 23 जातियाँ, उभयचरों की 24 जातियाँ, सरस्टियों की 02 जातियाँ, मकड़ी की 12 जातियाँ और मोलस्का वर्ग की 12 जातियाँ शामिल हैं। जेड एस आई के वैज्ञानिकों ने पूरे देश में काम कर इन जातियों का पता लगाया है। भारतीय प्राणिसर्वेक्षण के निदेशक डॉ.के.वेंकटरमण ने बताया कि जिन जातियों का हमने पता लगाया है वे बहुत छोटे से भौगोलिक क्षेत्र में उपलब्ध हैं। इसलिए वे विलुप्त होने के कगार पर हैं। प्राणियों के रहने का खत्म होता ठिकाना इसका मुख्य कारण है। अधिकतर नई जातियाँ पूर्वी घाट, पश्चिमी घाट और उत्तरपूर्वी राज्यों के जैवविविधता संपन्न इलाकों में मिली हैं।

○○○

12

माटी की कहानी

नवनीत कुमार गुप्ता

साधारण सी दिखने वाली मिट्टी में विभिन्न रासायनिक तत्वों का समाहित होते है; जिनके कारण मिट्टी, पृथ्वी पर जीवन के लिए बहुत महत्वपूर्ण कारक बनी हुई है। तभी तो महान वैज्ञानिक बर्जीलियस ने मिट्टी को प्रकृति की रासायनिक प्रयोगशाला कहा था। वैसे भी मिट्टी अकार्बनिक, कार्बनिक पदार्थों और जीवन को आश्रय देने वाले जैवमंडल का एक विशिष्ट पारितंत्र है।

मिट्टी के महत्व को देखते हुए संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा वर्ष 2013 में 68 वीं बैठक के दौरान एक प्रस्ताव पारित कर 5 दिसंबर को प्रतिवर्ष विश्व मृदा दिवस एवं सन् 2015 को अंतरराष्ट्रीय मृदा वर्ष मनाने का निर्णय लिया था। इस प्रकार पिछले साल 22 दिसंबर को पहला विश्व मृदा दिवस मनाया गया। सन् 2012 से वैश्विक मिट्टी भागीदारी कार्यक्रम भी चलाया जा रहा है। इसी के अंतर्गत इस साल अंतरराष्ट्रीय मृदा वर्ष के आयोजन की जिम्मेदारी विश्व खाद्य एवं कृषि संगठन को दी गई है। इन आयोजन का उद्देश्य मिट्टी के आवश्यक पारिस्थितिक कार्यों के बारे में जागरूकता का प्रसार करते हुए इसके कटाव को रोकना है ताकि आने वाले पीढ़ियों का भविष्य खुशहाल ही सके।

अंतरराष्ट्रीय मृदा वर्ष स्वस्थ मिट्टी के महत्व को रेखांकित करते हुए इसके संरक्षण की प्रेरणा देता है। इस वर्ष के आयोजन के दौरान मिट्टी के महत्व को नागरिक समाज एवं नीति निर्माताओं तक प्रसारित किया जाएगा। नागरिकों को मिट्टी के विभिन्न उपयोगी महत्वों जैसे खाद्य सुरक्षा, जलवायु परिवर्तन के अनुकूलन और आवश्यक संधारणीय प्रबंधन और मिट्टी संसाधनों के संरक्षण के लिए प्रभावी नीतियों और कार्यों का समर्थन के लिए प्रेरित किया जाएगा। इसके साथ ही क्षेत्रीय, राष्ट्रीय स्तरों पर मिट्टी की गुणवत्ता में सुधार पर कार्यक्रमों का आयोजन किया जाएगा।

अंतरर्राष्ट्रीय मृदा वर्ष के अंतर्गत जनमानस के मध्य प्रसारणीय मुख्य संदेश यह है कि स्वस्थ मिट्टी स्वस्थ खाद्य उत्पादन का आधार होने के साथ ही हमारे ग्रह की जैवविविधता का आधार भी है। इसके अलावा मिट्टी जल को अपने में समा लेती है। जल–संरक्षण के द्वारा मिट्टी बाढ़ और सूखे जैसी आपदाओं से निपटने मे हमारी मद्दगार साबित हो सकती है। कार्बन चक्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने के कारण जलवायु–परिवर्तन की चुनौती से निपटने में मिट्टी अत्यधिक उपयोगी है।

जीवन का आधार–मिट्टी

वैसे यह तो हम जानते ही हैं कि मिट्टी वनस्पतियों का आधार है। इसीलिए यह जीवन का भी आधार है। इसमें न केवल विभिन्न प्रकार के वनस्पति उगते हैं बल्कि यह मानवों सहित अरबों–खरबों जीवों को आश्रय प्रदान कर उनका भरण–पोषण करती है। पेड़–पौधों के लिए मिट्टी एक आधारभूत प्राकृतिक संसाधन है जो उसकी पोषक तत्वों की अधिकांश आवश्यकता को पूरी करती है। मिट्टी में विभिन्न पोषक तत्वों और खनिजों की मात्रा विद्यमान होती है। पेड़–पौधों में पानी की आपूर्ति में भी मिट्टी का अहम योगदान होता है। मिट्टी के सूक्ष्म छेद पानी को जकड़े रखते हैं। यही पानी मिट्टी से पेड़–पौधों में पहुँचता है, और मिट्टी से विभिन्न पोषक तत्व भी पानी में घुलकर पेड़–पौधों की जड़ों द्वारा अवशोषित कर लिए जाते हैं।

मिट्टी हजारों प्रकार के जीव–जंतुओं का घर है। मिट्टी मे तो कितने सारे केचुएँ और कीड़े होते हैं। केचुओं को प्राकृतिक हलवाहा भी कहा जाता है और ये तो मिट्टी के सबसे अच्छे दोस्त हैं। पेड़–पौधों में पोषक तत्व मिट्टी के द्वारा पहुँचते हैं। सोचने वाली बात यह है जिस मिट्टी में जीवों की संख्या जितनी ज्यादा होगी वह मिट्टी उतनी अच्छी गुणवत्ता की मानी जाती है।

पोषक तत्वों का चक्रण करती मिट्टी

सभी जीवों का शरीर कार्बनिक और अकार्बनिक तत्वों से बना होता है। सजीवों के शरीर में अनेक प्रकार के तत्व होते हैं। जीव–जंतुओं और पेड़–पौधों के मरने के बाद इनमें उपस्थित कार्बनिक तत्व और खनिज पुनः मिट्टी में मिल जाते हैं। इस प्रक्रिया में मिट्टी में उपस्थित विभिन्न सूक्ष्मजीव सहायक होते हैं। सूक्ष्मजीव मृत जीवों और पेड़–पौधों का विघटन कर उनमें उपस्थित विभिन्न तत्वों को मिट्टी में मिला देते हैं। इस प्रकार विभिन्न जीव और पेड़–पौधे मिट्टी से ही पोषक तत्व लेते हैं और बाद में मर–खप कर मिट्टी में मिल कर विभिन्न पोषक तत्वों को वापस मिट्टी को ही लोटा देते हैं। इस प्रकार मिट्टी में विभिन्न पोषक तत्वों का लगातार चक्रण चलता रहता है। इस प्रकार मिट्टी विभिन्न पोषक तत्वों से समृद्ध होती हुई जीवन को चलाती रहती है। इस पूरे प्रक्रम में सूक्ष्म जीवों की विशेष भूमिका होती है। सूक्ष्म जीवों की अनुपस्थिति से मिट्टी में पोषक तत्वों की मात्रा कम हो जाएगी और मिट्टी बंजर हो जाएगी। इसीलिए मिट्टी के ये सूक्ष्म जीव बड़े उपयोगी हैं। इन सूक्ष्मजीवों की पर्याप्त मात्रा से मिट्टी पोषक तत्वों से भरपूर होने पर भरपूर फसल उपजती है और

पेड़–पौधों का भी अच्छी तरह विकास होता है। अनाज भी तो मिट्टी में ही उगता है। यदि मिट्टी में पोषक तत्व पर्याप्त मात्रा में होंगे तो खेतों में फसलें भी अच्छी होंगी। एक और महत्वपूर्ण बात यह है कि प्रकृति में चलने वाले नाइट्रोजन चक्र में मिट्टी में रहने वाले सूक्ष्मजीवों की अहम भूमिका होती है। फलीदार पौधों की गांठों में रहने वाला राइजोबियम नामक जीवाणु सहजीवन के सिद्धांत पर पौधों से कार्बोहाइड्रेट और अन्य पदार्थ प्राप्त कर बदले में उन्हें वायुमंडल की नाइट्रोजन को उपयोगी रूप में उपलब्ध कराता है, अर्थात जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये मिट्टी में रहने वाले अनेक सूक्ष्मजीव पौधों के साथ साझेदारी से भी काम करते हैं। ये सूक्ष्मजीव वायुमंडल की नाइट्रोजन को नाइट्राइट में बदल देते हैं, जो पौधों की जड़ों द्वारा सोख ली जाती है जिसका उपयोग पौधें अपने विकास के लिए आवश्यक यौगिकों के निर्माण में करते हैं।

अनाज उपजाती मिट्टी

मिट्टी से ही हमें अनाज मिलता है। बिना मिट्टी के पेड़–पौधों और अनाज का उगना संभव उनके सीधे खड़े होने के लिए भी आवश्यक है। वैसे मिट्टी एक जटिल रचना है, जिसके निर्धारण में कई कारक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। मिट्टी को एक जटिल व गतिशील रचना भी कहा जा सकता है जिसमें कई क्रियाएं, अभिक्रियाएँ, चलती रहती हैं। मृदाविज्ञान में मिट्टी के विभिन्न गुणधर्मों का अध्ययन किया जाता है। मृदावैाानिक मिट्टी के निर्माण, उसकी सरंचना और गुणधर्मों का अध्ययन करते है।

मिट्टी पर मंडराता संकट

अंधाधुंध रासायनिक खाद और कीटनाशियों के उपयोग से मिट्टी के जटिल पारितंत्र में बदलावों के कारण ही मिट्टी की उपजाऊ क्षमता में शायद कमी आई है। लगता है अधिक पैदावार के चक्कर में हमने रासायनिक खाद व कीटनाशियों के प्रयोग से मिट्टी में उपस्थित विभिन्न लाभकारी जीवों को भी समाप्त कर दिया है।

आधुनिक समय में मिट्टी के स्वास्थ्य की अनदेखी की जा रही है। इसीलिए एक तिहाई मिट्टी निम्नीकृत हो चुकी है। यहि ऐसा ही हाल रहा तो सन् 2050 तक कृषि–योग्य और उत्पादक भूमि सिमटकर सन् 1960 की तुलना में एक चौथाई रह जाएगी। समस्या तब और गंभीर हो जाएगी तब उस समय हमारे सामने अब से दो अरब अधिक लोगों यानी कुल 9 अरब लोगों के लिए भोजन उपलब्ध कराना होगा। उस समय हमें बेहतर पोषण के लिए 60 प्रतिशत अधिक अनाज उगाना होगा।

इसलिए इस बात में कोई शक नहीं कि प्राकृतिक संसाधनों पर दबाव निरंतर बढ़ता जाता है। ऐसा भी नहीं है कि हम मिट्टी को कुछ ही समय में बना सकेंगे। असल में मिट्टी का निर्माण तो हजारों साल चलने वाली प्राकृतिक प्रक्रियाओं से होता है। बदलते मौसम, तेज हवाओं और पानी के द्वारा चट्टानों के चटकने और टूटने से बारीक चूरा मिट्टी का निर्माण होता है और इसमें समय के साथ कई कार्बनिक पदार्थ भी मिल जाते हैं। इसे ही मृदा कहा जाता है। लेकिन बारिश और तेज हवाओं के चलते कुछ ही देर में मिट्टी की ऊपरी परत का कटाव हो सकता है।

ऐसी स्थिति से निपटने के लिए संधारणीय तरीके से मिट्टी का प्रबंधन करना होगा। ऐसा करने के कई तरीके हैं। इनमें से एक तरीका फसल विविधीकरण है। हमारी खाद्य सुरक्षा प्राप्त करने और कुपोषण सहित जलवायु परिवर्तन की समस्या से लड़ते हुए संधारणीय विकास के लिए मिट्टी का स्वस्थ ठीक रहना आवश्यकता है। मिट्टी की महिमा अतुलनीय है। शायद इसलिए देशभक्ति के संकल्प के लिए मिट्टी को साक्षी माना जाता है। हम भी अंतरराष्ट्रीय मृदा वर्ष–2015 के अवसर पर मिट्टी संरक्षण का संकल्प लें और इस धरती को हरा–भरा बनाएं।

ooo

13

विज्ञान की नई उपलब्धियाँ

प्रेमचंद्र श्रीवास्तव

1. प्राचीन रोगाणुओं की खोज मे

सूक्ष्मजीव आँखों से न दिखने वाने अत्यंत सूक्ष्म होते हैं। इन्हें एक विशेष उपकरण यंत्र 'माइक्रॉस्कोप' से देखा जाता है। वे वैज्ञानिक या शोधार्थी जो सूक्ष्मजीवों का अध्ययन करते हैं अथवा शोध करते हैं उन्हें सूक्ष्मजीवविज्ञानी कहते हैं। वर्तमान हमारे लिए उपयोगी में बहुत से पुराने सूक्ष्मजीव विलुप्त होने की कगार पर हैं। शोधार्थी विश्व के विभिन्न भागों से ऐसे ही सूक्ष्मजीवों और रोगाणुओं को न केवल ढूँढ़ रहे हैं वरन् उनकी संख्या में वृद्धि भी कर रहे हैं और उन्हें सूचीबद्ध भी कर रहे हैं। इस छोटे से लेख में इसी विषय पर प्रकाश डाला गया है।

कुछ वर्ष पूर्व इटली के सूक्ष्मजीव विज्ञानियों के एक दल ने बर्कीना फासो के युवा ग्रामीणो की आँत में विद्यमान सूक्ष्मजीवों की तुलना इटली के फ्लोरेन्स के बच्चों की आँतों मे पाए जाने वाले सूक्ष्मजीवों से की। फ्लोरेंस के बच्चों की अपेक्षा ग्रामीण (जिनका आहार ज्वार या बाजरा था) की आहारनली में विद्यमान सूक्ष्मजीवों में विविधता थी। फ्लोरेन्स के बच्चों की आहारनली में पाये जाने वाले सूक्ष्मजीवों में जहाँ प्रोटीन, वसा और सरल शर्करा को तोड़ने (विखंडित करने) की क्षमता थी वहीं बर्कीना फासो के ग्रामीणों की आहारनली में पाए जाने वाले सूक्ष्मजीव समूह में रेशों (फाइबर) को भी तोड़ने की क्षमता थी।

उपर्युक्त खोज से प्रेरित जस्टिन सोनेनवर्ग नामक सूक्ष्मजीवविज्ञानी इस नतीजे पर पहुँचे कि पश्चिमी देशों के निवासियों के भोजन से मानव का विकास प्रभावित और परिवर्तित होता जा रहा है। इस बदलाव के लिए अन्य विभिन्न कारक भी ज़िम्मेदार हैं, जिनके कारण मनुष्यों में सूक्ष्मजीवों में विभिन्नता पाई जाती है, यथा प्रतिजैविक (ऐन्टीबायोटिक्स) और आधुनिक सफाई। शोधार्थियों का कहना है कि पारंपरिक रूप से आहारनली में पाए जाने वाले सूक्ष्मजीवों के विलुप्तीकरण ने असंचरणीय रोगों की वृद्धि में सहायता की हैं।

इसलिए सूक्ष्मजीवों को सूचीबद्ध करने और संरक्षित करने का प्रयास प्रारंभ हो गया है, उन सूक्ष्मजीवों को जो प्राचीन समय के पर्यावरण में विद्यमान थे। शोधार्थी अमेजन में नदियों के किनारे पूर्वी अफ्रीका के घास के मैदानों, और पापुआ न्यू गिनी के ऊँचे पर्वतों जैसे स्थानों में सूक्ष्मजीवों को ढूँढ़ते फिरते हैं। वे स्वयं तेजी से ऐसे सूक्ष्मजीवों के पर्यावरण को सूचीबद्ध करते हैं ताकि वे विलुप्त न हो जाए। यह सूचना **नॉटिलस** (NAUTILUS) नामक पत्रिका में प्रकाशित हुई हैं।

यह हमारे लिए अंतिम समय होगा जब हम सारे संसार के सूक्ष्मजीवों को एकत्र करके उनकी संख्या में वृद्धि करें। सूक्ष्मजीव विज्ञानी (माइक्रोबायलोजिस्ट) रॉब नाइट का ऐसा कहना है सैनडियोगो में स्थित यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया से संबद्ध और यह कार्य शीघ्र करना है ताकि देर न हो जाए क्योंकि पहले ही पर्याप्त विलंब हो चुका है।"

2.जीवन संपोषक संश्लेषित प्रोटीन तैयार

वाशिंगटन से प्राप्त एक सूचना के अनुसार वैज्ञानिको ने एक ऐसें कृत्रिम प्रोटीन का निर्माण कर लिया है जिसमें जीवित कोशिकाओं में वृद्धि करने की क्षमता विद्यमान है। प्रिन्स्टन के विज्ञानियों ने प्रकृति में अनुपलब्ध एमिनो अम्ल के अनुक्रमों द्वारा विभिन्न किस्मों के प्रोटीनों का कृत्रिम निर्माण करने में सफलता प्राप्त कर ली है। प्रयोगशाला परीक्षणों में इन कृत्रिम प्रोटीनों ने उसी तरह की क्षमता प्रदर्शित की है जैसा कि प्राकृतिक प्रोटीन जीवित कोशिकाओं में दर्शाते हैं। यहाँ जो हम प्राप्त करते हैं वह ऐसी आण्विक मशीनें हैं जो जीवित कोशिकाओं के अंदर भली भाँति कार्य करती हैं यद्यपि उन्हें कृत्रिम जीनों से निकाला गया है।

उपर्युक्त परिणामों से जो तथ्य उभर कर सामने आता है वह यह कि जीन और प्रोटीन प्राकृतिक रूप से पाए जाने तक ही सीमित नहीं हैं और इनका निर्माण कृत्रिम रूप से भी किया जा सकता है। इस संबंध में इस शोध दल के प्रमुख माइकेल हेक्ट (Michael Hecht) कहते हैं– "हमारा कार्य इंगित करता है कि कृत्रिम रूप से निर्मित जीनोमों में जीवित कोशिकाओं के भरण–पोषण की जो क्षमता है, वह अब हमारी पहुँच में हैं।"

इस शोध कार्य के पूर्व जो भी शोध कार्य कृत्रिम जीव विज्ञान में हुआ है वह सब प्राकृतिक जीवों से लिए गए अंगों को पुनः व्यवस्थित करने पर केंद्रित रहा है। माइकेल बल देकर कहते हैं कि इसके विपरीत उनके शोध से यह स्पष्ट हुआ है कि जीवों की क्रियाएँ न केवल प्रकृति द्वारा अपितु प्रयोगशाला में निर्मित वृहत् अणुओं (मैक्रोमॉलीक्यूल्स) द्वारा भी संपादित की जा सकती हैं।

यहाँ एक सहज प्रश्न उठता है कि विज्ञानियों को यह विलक्षण उपलब्धि मिली कैसे? वैज्ञानिकों ने ऐसे आनुवंशिक अनुक्रमों को तैयार किया जिन्हें प्रकृति में कभी भी नहीं देखा गया और इनसे पूर्णरूपेण कृत्रिम प्रोटीन बनाया गया। इन कृत्रिम प्रोटीनों को किसी भी जीवित उदाहरण पर डिज़ाइन

नहीं किया गया था। फिर इन प्रोटीनों को जीवित जीवाणुओं के अंदर प्रविष्ट कराया गया। बहुत से जीवाणुओं का भरण–पोषण उनके इन कृत्रिम आण्विक मशीनों द्वारा हुआ।

जीवविज्ञान के शोध के क्षेत्र में यह शोध एक लंबी छलांग है। यह शोध संकेत करता है कि कृत्रिम जीनोम में जीवन के भरण–पोषण की क्षमता अब वैज्ञानिकों की पकड़ के निकट है। इस शोध के दूरगामी परिणामों की आशा बलवती होती है।

3.अब जीवाणुभोजी विषाणु चार्ज करेगा मोबाइलों को

लंदन के समाचार पत्र 'डेली मेल' में प्रकाशित एक सूचना से पर्यावरणविदों में आशा की एक नई लहर उत्पन्न हुई हैं। इसके कारण आने वाले वर्षों में विषैली धातुओं के प्रयोग में कमी आने की नई संभावना दिखाई दे रही है। कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय, बर्कले के वैज्ञानिकों के एक दल ने दावा किया है कि वे एक ऐसी प्रौद्योगिकी का विकास करने में सक्षम हैं, जिसमें मोबाइल फोन की बैटरी को चार्ज (आवेशित) करने के लिए विषैली धातुओं के स्थान पर जीवाणुओं (बैक्टीरिया) का भक्षण करने वाले बैक्टीरियोफाज– M 13 विषाणुओं का प्रयोग किया जा सकता हैं।

इन विषाणुओं में एक विशेष गुण पाया गया है, जिसे दाबविद्युत (पीजोइलेक्ट्रिसिटी) कहते हैं। पीजोइलेक्ट्रिसिटी पदार्थ का वह गुण है जिससे आवश्यकतानुसार यांत्रिक ऊर्जा में परिवर्तित किया जा सकता है और विद्युत ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा को पुनः यांत्रिक ऊर्जा में बदला जा सकता है। वैज्ञानिकों का विश्वास है कि इस विधि से मोबाइल फोन को चलते–चलते भी आवेशित किया जा सकेगा और साथ ही फोन में प्रयुक्त विषैली धातुओं से भी छुटकारा मिल जायेगा। अधिकांश मोबाइल फोन के माइक्रोफोन दाब विद्युत् होते हैं, क्योंकि माइक्रोफोन का कार्य है ध्वनि ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित कर अग्रेषित करना और दूसरे सिरे पर पुनः उसे ध्वनि (तरंग) ऊर्जा में परिवर्तित कर श्रव्यध्वनि उत्पन्न करना।

दाबवद्युत घटकों के निर्माण में लेड (सीसा) और कैडमियम जैसी भारी और विषैली धातुओं का समन्वय किए बिना ही विद्युत ऊर्जा उत्पन्न करने की क्षमता है।

सेयांग वुक ली (Seyoung Wuk Lee) और उनके सहयोगियों ने शोध के दौरान यह पाया कि पेंसिल के आकार वाला जीवाणु भोजी (बैक्टीरियोफेज) M 13 विषाणु, ऊर्जा का आदर्श स्रोत हो सकने में सक्षम है क्योंकि यह मानव जाति के लिए हानिरहित है। साथ ही यह उत्पादन में कम श्रमसाध्य और सस्ता भी है। इसके अतिरिक्त जीवाणुओं से भरे एक पात्र (फ्लास्क) में खरबों (ट्रिलियन) विषाणुओं को उत्पादन किया जा सकता है। M 13 विषाणुओं की विद्युत ऊर्जा उत्पन्न करने की शक्ति को बढ़ाने के लिए वुक ली और उनके सहयोगियों ने विषाणुओं की ऊपरी परत के प्रोटीन आवरण की अमीनो अम्ल श्रृंखला में ग्लूटामेट के चार ऋण–आवेशित अणुओं का प्रवेश करा कर कुछ परिवर्तन किए।

4. घातक विष आर्सेनिकः गहरे समुद्री जीवाणुओं का भोजनः

सहसा विश्वास तो नहीं होता, लेकिन सच्चाई यह है कि मनुष्यों के लिए विषैला आर्सेनिक समुद्र की गहराई में पाए जाने वाले जीवाणुओं का प्रमुख भोजन है। अनुसंधानकर्ताओं ने कैलिफोर्निया की झील की गइराइयों में एक ऐसे किस्म के जीवाणुओं को ढूंढ़ निकाला है जो आर्सेनिक विष पर जीवित रहते हैं। इस विस्मयकारी खोज से पृथ्वी और उसके परे अन्य प्रकार के विचित्र जीवों के अस्तित्व की खोज का मार्ग खुल गया है।

'नासा' द्वारा प्रदत्त आर्थिक सहयोग से चलने वाली इस शोध योजना से स्पष्ट हुआ है कि जीवन के लिए आवश्यक तत्व कार्बन, हाइड्रोजन, नाइट्रोजन, ऑक्सीजन, फॉस्फोरस और सल्फर हैं। किंतु जीवाणु न केवल आर्सेनिक पर जीवित रहते हैं वरन् वे वृद्धि के लिए तत्वों को डी एन ए में और कोशिकाओं की झिल्लियों में शामिल कर लेते हैं।

एक और तथ्य सामने आया है वह यह कि यहाँ जीवों के लिए आर्सेनिक, भवन–निर्माण की ईंट की तरह प्रयुक्त होता है। शोधदल के एक सदस्य एरियेल एन्बर का कहना है– "हमारा यह विचार था कि जीवन के लिए प्रमुख 6 तत्वों की ही आवश्यकता होती है और इसके अपवाद नहीं हैं,। किंतु यहाँ आर्सेनिक अपवाद हो सकता है।"

इस खोज की सूचना फेलिया वाल्फे सिमॉन (Felisa Walfe–Simon) द्वारा की गई जो एरियेल एन्बर के शोध दल के पूर्व विज्ञानी थे और एरिजोना स्टेट यूनिवर्सिटी के "स्कूल ऑफ अर्थ एण्ड स्पेस एक्सप्लोरेशन" से संबद्ध थे।

5. चिड़ियों का प्राचीनतम जीवाश्म

चीन के एक अनुसंधानकर्ता ने यह दावा किया है कि उन्होंने संसार की प्राचीनतम चिड़ियों में एक –**जिनफेंगोप्टेरिक्स एलीगेन्स (Jinfengptenyx elegans)** के जीवाश्म को ढूँढ़ निकाला है। यह जीवाश्म बीजिंग से 120 किलोमीटर उत्तर दिशा की ओर फेंगनिंग काउन्टी में मिला था। चिड़िया के जीवाश्म के पूरे शरीर के साथ पंख जुड़े हुए थे, सिर तिकोना था और चोंच छोटी थी। किंतु चोंच के भीतर 36 दाँत थे। दाँत चिकने थे। जीवाश्म की लंबाई 54.8 सेंटीमीटर थी। इस जीवाश्म के खोजकर्ता जी किउइंग "चाइनीज़ एकेडेमी ऑफ जियालोजिकल साइंसेज" के अंतर्गत् जियालोजी इंस्टीट्यूट में रिसर्च फेलो हैं। 'जी' और उनके सहयोंगियों के अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि जीवाश्म के ग्रीवा–कशेरुक (Cervical vertebrae) में 11 खंड औ पुच्छीय कक्षेकक में 23 खंड है। पक्षी की पूंछ 27.3 सेन्टीमीटर लंबी है अथवा यों कहें कि शरीर की लंबाई की तुलना में कुछ अधिक हैं।

ऐसा माना जाता था कि पक्षियों के प्राप्त जीवाश्मों में **आर्किऑप्टेरिक्स** *(Archaeopteryx)* पक्षी का जीवाश्म सबसे पुराना है। किंतु इस नए जीवाश्म की खोज से अब यह सिद्ध हो चुका है कि जर्मनी में 1861 में पाया गया **आर्किऑप्टेरिक्स** नहीं, वरन् **जिनफेंगोप्टेरिक्स एलिगैन्स** इससे

पुराना है। यह अंतिम/विलंबित मध्य जंतु *(Late Mesozoic)* काल का जीवाश्म है। आर्किऑप्टेरिक्स से यह टाँगों के मामले में भी भिन्न है, क्योंकि **आर्किऑप्टेरिक्स** में आगे और पीछे के पैरों की लंबाई लगभग समान होती है। दूसरी विशेषता यह है कि **आर्किऑप्टेरिक्स** की अपेक्षा इसकी चोंच में लंबे और संख्या में अधिक दाँत होते हैं। इस प्रकार 'जी' और सहयोगियों ने **जिनफेंगोप्टेरिक्स** के जीवाश्म में कुल 205 लक्षण बताए हैं। उन्होंने यह भी इंगित किया है कि चीन और जर्मनी के दोनों पक्षियों के जीवाश्मों को देखने से ऐसा लगता है कि दोनों चिड़ियों में सहभगिनी संबंध (sisterly relation) रहे हों।

ooo

डॉ. सैय्यद ज़हूर कासिम नहीं रहे

प्रसिद्ध वैज्ञानिक एवं प्रथम अंटार्कटिक खोजयात्रा दल के नेता डॉ. सैय्यद ज़हूर कासिम का दिल्ली में 88 वर्ष की आयु में, नवंबर 2015 में निधन हो गया। वे काफी दिनों से अस्वस्थ चल रहे थे।

डॉ. सैय्यद ज़हूर कासिम का जन्म इलाहाबाद में, हुआ था और उनकी प्रारंभिक शिक्षा मजीदिया इस्लामिया इंटर कॉक्लेज में हुई थी। उच्च शिक्षा के लिए वे अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी चले गए जहाँ से उन्होंने बी एस–सी और एम एस–सी की उपाधियाँ प्राप्त कीं। बाद में उन्होंने यूनिवर्सिटी कॉलेज ऑफ़ नार्थ वेल्स से पीएचडी और डी एस–सी की उपाधियाँ प्राप्त की।

1981–82 में प्रथम ऐंटार्कटिका मिशन का नेतृत्व किया और उसके अतिरिक्त डॉ. कासिम ने अगले सात ऐन्टार्कटिका मिशन की न केवल योजना बनाई वरन् उनका निर्देशन भी किया। उन्होंने 100 लेख लिखे जो विभिन्न शोधपत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं।

डॉ. कासिम ने अनेकानेक पुरस्कार प्राप्त किए जिसमें 'जीवनकालिक उपलब्धियों के लिए', 'पद्मश्री', 'पद्मभूषण', 'इंडियन साइंस कांग्रेस' और 'नेशनल ओशन साइंस एन्ड टेक्नोलॉजी एवार्ड', भारत सरकार द्वारा प्रदान किया गया था। उन्हें यूके से 'ओशेनोलॉजी इंटरनेशनल लाइफटाइम एचीवमेंट एवार्ड' भी मिला।

वे योजना आयोग के सदस्य और जामिया मिलिया इस्लामिया विश्वविद्यालय, नई दिल्ली के कुलपति (वाइस चांसलर) भी रहे।

डॉ. कासिम के निधन से भारत ने एक वैज्ञानिक, ऐंटार्कटिका मिशन के नेता और योजनाकार, योजना आयोग के सलाहकार सदस्य और एक सपूत को खो दिया है, किंतु अपने कार्यों में वे सदैव याद किए जाएंगे और वैज्ञानिकों की आने वाली पीढ़ियों के प्रेरणास्रोत बने रहेंगे।

ooo

14

जल प्रदूषण

डॉ.एन.के. चतुर्वेदी

ऑक्सीजन के उपरांत जीवन के लिए जल अति आवश्यक है। मनुष्य के भार का 70 प्रतिशत भाग जल होता है। विश्व में पृथ्वी के चारों और 71 प्रतिशत जल है और शोध 29 प्रतिशत में स्थल है। स्थल के कुछ भाग पर ही आबादी है। अधिकतर भाग पर पहाड़, जंगल, नदियाँ, झरने व तालाब हैं। जितना भी जल है उसका केवल 3 प्रतिशत ही पीने योग्य है। ताजा पीने–योग्य जल हिमनद पोलर आइस से प्राप्त होता है। इसी प्रकार भूजल गहरी चट्टान बनने के कारण एकत्रित होता रहता है।

जल की उत्पत्ति के लिए विश्व में हाइड्रोलॉजिकल चक्र है। विश्व में पृथ्वी की आर्द्रता और समुद्र जल सूर्य की गर्मी से वाष्पीकृत होकर वायुमंडल में चले जाते हैं। वहाँ धूल के कणों से मिलकर बादल का निर्माण करते हैं। जब बादलों में आर्द्रता अधिक हो जाती है तो वह वर्षा या बर्फ के रूप में पृथ्वी पर आ जाती है। वर्षा–जल झरनो, झीलों, नदियों द्वारा पृथ्वी में आर्द्रता पुनः उत्पन्न होती है। इस प्रकार हाइड्रोलॉजिकल चक्र पूर्ण होता है। विश्व में जल की पूर्ति होती रहती है।

विश्व में जहाँ–जहाँ जल उपलब्ध है वहाँ–वहाँ आबादी बसी। फिर व्यापार शुरू हुआ। व्यापार होने से सभ्यता का विकास हुआ जो बढ़ता गया। जल का उपयोग आवागमन, सफाई, कृषि, पीने में किया जाता है। वैज्ञानिकों का मानना है कि जीवन की उत्पत्ति जल में ही हुई है। अतः जल का विशेष महत्व है। विकास एवं उन्नति से विश्व दो भागों में विभाजित हो गया है। एक भाग विकसित राष्ट्र कहलाता है, जहाँ विकास चरम पर है। उससे संपन्नता है। दूसरा भाग विकासशील राष्ट्र है। जहाँ विपन्नता है, गरीबी है और सुख साधनों का अभाव हैं। जनसंख्या भी अधिक है। इससे जल का दोहन और उपयोग अधिक हो रहा है।

जनसंख्या विस्फोट के कारण औद्योगीकरण भी बढ़ा है। शहरीकरण भी बढ़ रहा है। वाहनों की संख्या में अपार वृद्धि हुई है। जीवाश्म ईंधन का अत्यधिक उपयोग किया जा रहा है। जंगलों, वनों की कटाई भी चरम पर है। इसके दुष्परिणाम दृष्टिगोचर हो रहे हैं। प्राकृतिक आपदाएँ, भूस्खलन, बाढ़ आना, सूखा पड़ना, जटिल रोगों में अपार वृद्धि हो रही है। विकासशील राष्ट्रों में साफ–सफाई पर अधिक बल नहीं दिया जाता है। जनसंख्या विस्फोट, जंगलों की कटाई, सीमेन्ट–कंकरीट के जंगलों को खड़ा करने से, औद्योगीकरण, शहरीकरण, वाहनों की संख्या में वृद्धि से जल और भूजल प्रदूषित हो रहे हैं। वैश्विक उष्मण (ग्लोबल वार्मिंग), जलवायु परिवर्तन के कारण विश्व में जल की कमी हो रही है। संयुक्त राष्ट्र संघ ने 2013 को अंतरराष्ट्रीय जल सहयोग वर्ष घोषित किया है, ताकि सबको जल मिल सके।

कृषि में जल का उपयोग बहुत मात्रा में किया जाता है। जल की कमी को देखते हुए ऐसे प्रयास किए जाते रहे हैं कि ऐसे बीजों का उपयोग किया जाए, जो कम जल का उपयोग कर उत्पादन अधिक दे सकें। पीड़कनाशियों का भी उपयोग समुचित मात्रा में हो करना चाहिए। सबको जल मिल सके।

जल का मुख्य स्रोत कुआँ, तालाब, झीलें नदियाँ हैं। आजकल जल की कमी हो रही है। साथ ही जल प्रदूषित भी हो रहा है। प्रदूषित जल पर्यावरण तथा स्वास्थ्य को प्रभावित करता है। जल रंगहीन, गंधहीन, पारदर्शी, मीठे स्वाद वाला होता है। अतिशुद्ध जल का PH मान 7 होता है। जल उच्च आवेशित, उच्च पराबैद्युतांक, उच्च पृष्ठ–तनाव, वांला होता है। ये गुण स्थान विशेष की वनस्पति और जानवरों पर प्रभाव डालते हैं।

प्राकृतिक जल में विभिन्न आयन जैसे पौटेशियम (K^+), सोडियम (Na^+), मैग्नीशियम (Mg^{++}), कैल्सियम (Ca^{++}), क्लोराइड (Cl^-), सल्फेट (SO_4^{--}), कार्बोनेट (CO_3^{--}), बाई कार्बोनेट (HCO_3^-), नाइट्रेट (NO_3^-), पाए जाते हैं। जल के नमकीन (Salinity) होने के लिए ये आयन उत्तरदायी होते हैं। प्राकृतिक जल और लवर्णायता वनस्पतियों और जन्तुओं की विभिन्न जातियों की उपलब्धता विभिन्न क्षेत्रों के लिए उत्तरदायी हैं।

जल दो प्रकार का होता है। एक मृदु जल–जिस जल में क्लोराइड, सल्फेट, बाईकार्बोनेट, कार्बोनेट अनुपस्थित होते है, जो साबुन के साथ शीघ्र झाग देता है। दूसरा कठोर जल जिसमें क्लोराइड, सल्फेट, बाइकार्बोनेट, कार्बोनेट उपस्थित होते हैं। यह जल साबुन के साथ शीघ्र झाग नहीं देता है। कठोर जल समुद्री (मैराइन) पर्यावरण देता है और मृदु जल प्राकृतिक पर्यावरण देता है। समुद्री और प्राकृतिक जल में सामन्जस्य स्थापित कर जलीय दुनिया का निर्माण होता है।

पीने–योग्य जल रंगहीन, गंधहीन, स्वाद में मीठा होता है। इस जल का PH मान 7–8.5 के मध्य होता है। इस जल में नगण्य मात्रा में लवण और धातुएँ होती हैं। जल की शुद्धता निम्न मापदंडों पर आधारित है। पहला जल में घुलित ऑक्सीजन की मात्रा जितनी अधिक होगी जल उतना ही शुद्ध होगा। दूसरा जैवरासायनिक (बायोकेमीकल) ऑक्सीजन डिमाण्ड है। जैव पदार्थ को जीवाणु

द्वारा आक्सीकृत करने के लिए आवश्यक ऑक्सीजन की मात्रा को बी.ओ.डी. कहते हैं। जैव पदार्थ की अधिक मात्रा ऑक्सीजन की इस मात्रा को कम कर देती है। तीसरा केमिकल ऑक्सीजन डिमांड (सी.ओ.डी.) है। यह ऑक्सीजन की वह मात्रा है जो जल में उपस्थित कार्बनिक और अकर्बानिक पदार्थ को ऑक्सीकृत करने के लिए आवश्यक होती है। चौथा मापदंड कॉलीफार्म की उपस्थित मात्रा है। कॉलीफार्म जीवाणु होते हैं। कॉलीफार्म समूह मे वायुजीवी अवायुजीवी ग्राम नगेटिव जीवाणु होते हैं। इनकी अल्प मात्रा ही अपेक्षित हैं।

जल में अन्य पदार्थों का मिलना या जल में उपस्थित पदार्थों की मात्रा का बढ़ना प्रदूषण कहलाता है। मृदा, हवा और जीवन के लिए जल अनिवार्य हैं। जल, मृदा हवा में अतिरिक्त पदार्थों के एकत्रित होने से इनके गुणों में परिवर्तन हो जाता है। इसे प्रदूषण कहते हैं, जिन पदार्थों की उपस्थिति से मृदा, जल, वायु के भौतिक, रासायनिक गुणों में परिवर्तन होता है, उन्हें प्रदूषक कहते हैं।

प्रदूषक दो प्रकार के होते हैं। एक जैव निम्नीकरणीय अर्थात् वे पदार्थ जो अपशिष्ट और वाहितमल को आक्सीकृत या सूक्ष्म जीवों द्वारा पूर्ण रूप से अपघटित कर देते हैं। अपघटित होने पर दुर्गंध युक्त गैस उत्पन्न करते हैं। वे पदार्थ जो कार्बनिक और वाहितमल को ऑक्सीकृत या सूक्ष्म जीवों द्वारा पूर्ण से अपघटित नहीं करते, वरन वहाँ उपस्थित रहकर हानिकारक परिणाम देते हैं। जैसे भारी धातुएँ क्रोमियम, कैडमियम, पारा दूसरा अजैव निम्नकरणीय प्रदूषक डी.डी.टी. आदि।

जल प्रदूषण कई प्रकार का होता है, जो इस प्रकार है 1.भौतिक प्रदूषण, 2.अकार्बनिक प्रदूषण, 3.कार्बनिक प्रदूषण, 4.बायोलोजिकल प्रदूषण, 5. पेस्टीसाइड प्रदूषण, 6.कचरा प्रदूषण, 7.ऑयल प्रदूषण।

भौतिक प्रदूषण : – जिन पदार्थों के मिलने से जल के रंग, स्वाद और गंध में परिवर्तन हो जाता है, उसे भौतिक प्रदूषण कहते हैं। कुछ पदार्थ जल में मिलकर रंग देते हैं, जिससे जल रंगीन हो जाता है। कुछ सूक्ष्मजीव जल में मिलकर विशेष गंध देते है। जल का स्वाद भी परिवर्तित हो जाता हैं।

अकार्बनिक प्रदूषण :– कुछ उद्योगों के बहिःस्राव में सल्फाइड, नाइट्राइट, सल्फेट, फॉस्फेट पाया जाता है। ये पदार्थ जल में मिलकर धीरे–धीरे घटित होते रहते हैं। जिससे दुर्गंध निकलती है। अकार्बनिक प्रदूषकों से सी.ओ.डी. में परिवर्तन हो जाता है और जल प्रदूषित हो जाता है।

कार्बनिक प्रदूषण :– उद्योगों के स्राव में कार्बनिक पदार्थ होते हैं, जो जल में मिलकर जल के pH मान को परिवर्तित कर देते हैं, जिससे विलय ऑक्सीजन, बायोकैमिकल आक्सीजन डिमांड (बी.ओ.डी.) में परिवर्तन हो जाता है। पेस्टीसाइड, फंगीसाइड, बैक्टरीसाइड प्रायः कार्बनिक पदार्थ होते हैं। इनका सरलता से अपघटन नहीं होता। ये बी.ओ.डी. की मात्रा बढ़ा देते हैं जो अहितकर है। सरलता से अपघटित होने वाले पदार्थ भी जल को प्रदूषित करते हैं।

जैविक प्रदूषण :– यह प्रदूषण पादप आविष, कॉलीफार्म, बैक्टीरिया, स्पेटोकोकी विषाणु द्वारा उत्पन्न किया जाता है। सूक्ष्म जीव और विषाणु कई जलीय रोगों जैसे हैजा, पेचिश, टाइफायड, पीलिया, गैस्ट्रोएनट्राइटिस, पोलियो आदि रोगों को जन्म देते हैं। जीवाणु (बैक्टीरिया) और विषाणु (वाइरस) जल में उत्पन्न होकर जल को प्रदूषित करते हैं।

कचरा प्रदूषण :– प्रदूषण का मुख्य स्रोत कचरा कहलाता है जो नदियों में पाया जाता है क्योंकि नदियों में कूड़ा–करकट, गंदगी मिला दी जाती है। कचरे में भारी धातुएँ जैसे निकैल, क्रोमियम, कोबाल्ट, कैडमियम, लैड भी पाए जाते हैं, जो हानिकारक है। इन धातुओं के कारण पाद्य आविषता (फाइटोटोक्सीसिटी) स्तर अधिक हो जाता है, जो पेड़ों और मनुष्यों में रोग उत्पन्न करते हैं। कचरे के सड़ने पर अपघटन होता है जिससे गैसें निकलती हैं, जो दुर्गंध उत्पन्न कर, पर्यावरण को भी प्रदूषित करती है। कचरे के जल में मिलने से जल प्रदूषित होता है।

ऑयल प्रदूषण :–जब जल में जीवाश्म ऑयल मिल जाता है तो जल प्रदूषित हो जाता है। जल की विलेय ऑक्सीजन की मात्रा कम हो जाती है, जिससे जलीय जंतु मर जाते हैं। जब ऑयल टैंकर के रिसाव के कारण या टैंकर के नष्ट होने के कारण ऑयल जल में मिलकर जल को प्रदूषित करता है तो इसे ऑयल प्रदूषण कहते हैं।

पीडकनाशी (पेस्टीसाइड) प्रदूषण :– कृषि उत्पादन के बढ़ाने के लिए, फसलों में रोग उत्पन्न न हों इसलिए कुछ रसायन छिड़के जाते हैं। ये रसायन पीड़कनाशी कहलाते हैं। मृदा में पहुँच जाते हैं। फिर वर्षा जल के साथ सतह तथा भूमिगत जल को प्रदूषित कर देते हैं।

जल प्रदूषण कई कारणों से होता है। घरेलू बाहिःस्राव या सीवेज विसर्जन–वैज्ञानिक मेटकाफ और एडी (Metcaff & Eddy) के अनुसार घरेलू बाहिःस्राव में विलेय ठोस, निलंबित ठोस नाइट्रोजन, कार्बनिक नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, क्लोराइड, कैल्सियम कार्बोनेट, सिन्थेटिक डिटर्जेन्ट और जीवाणु पाए जाते हैं। दैनिक घरेलू कार्यों जैसे–खाना पकाना, स्नान करना, कपड़े धोना, घर की सफाई, फल–सब्जियों का कूड़ा, गंदा जल एवं अन्य प्रदूषणकारी अपशिष्ट पदार्थ होते हैं। वर्तमान समय में सफाई के लिए संश्लेषित अपभार्जकों का उपयोग तीव्र गति से बढ़ रहा है। ये जल स्रोतों को प्रदूषित कर रहे हैं।

वाहितमल:– इसके अंतर्गत घरेलू एवं सार्वजनिक शौचालयों से निःसृत मानव मल–मूत्र आते हैं। वाहित मल में कार्बनिक और अकार्बनिक पदार्थ होते हैं। ठोस मल का अधिकांश भाग कार्बनिक होता है। इसमें मृतोपजीवी रोग कारक सूक्ष्मजीवी विद्यमान् होते हैं। वाहितमल नाली, सीवर से होता हुआ जल स्रोत मुख्यतः नदियों में सीधे मिला दिया जाता हैं। खुले स्थानों में मनुष्य और पशुओं द्वारा त्याज्य मल भी वर्षा जल के साथ बहता हुआ जल स्रोतों में मिल जाता है, जो प्रदूषण का कारण बनता है। जनसंख्या वृद्धि के कारण वाहितमल जल से प्रदूषण एक गंभीर समस्या है।

औद्योगिक बाहिःस्राव :– विकास में उद्योगों का महत्वपूर्ण योगदान है। अत्यधिक औद्योगीकरण के कारण निकलने वाला बाहिःस्राव सीधे जल में मिला दिया जाता है। जिससे जल प्रदूषित हो रहा है। उद्योगों में उत्पादन प्रक्रिया के पश्चात् अनुपयोगी पदार्थ बचे रह जाते हैं या उत्पन्न होते हैं, जो औद्योगिक अपशिष्ट कहते हैं। अपशिष्ट में अम्ल, क्षार, लवण, वसा तेल, धात्विक तत्व विषैले रसायन विद्यमान होते हैं जो जल में मिलकर जल को प्रदूषित करते हैं। कागज, चीनी, वस्त्र, चमड़ा, शराब, औषधि निर्माण, खाद्य प्रसंस्करण, रंगाई, छपाई, उद्योगों से पर्याप्त मात्रा में अपशिष्ट निःसृत होते हैं जिनका निस्तरण जल स्रोतों मुख्यतया नदी में सीधे कर दिया जाता है। औद्योगिक अपशिष्ट कार्बनिक पदार्थ होते हैं, जिनका अपघटन जीवाणुओं द्वारा होता है। यह क्रिया मंदगति से होती है और दुर्गंध भी उत्पन्न करती है। आर्सेनिक, लेड, मरकरी, क्रोमियम, लोहा, जिंक ताबा आदि धातुएँ जल के p.H. मान को अव्यवस्थित कर देते हैं। तेल, ग्रीस, चर्बी, वसा भी विलेय ऑक्सीजन की मात्रा को कम करती है जिससे जलीय जीव विशेषकर मछलियाँ प्रभावित होती हैं।

कागज, दुग्ध उत्पादों का प्रक्रमण, रंगाई, धुलाई केंद्र, मोटर सर्विस स्टेशन से बी.ओ.डी. और क्षार जल में मिलते हैं जो जल स्रोतों में मिलकर जल को प्रदूषित कर देते हैं। विभिन्न उद्योगों में निःसृत प्रदूषकों के स्रोत एवं जल पर प्रभाव नीचे दिया जा रहा है :

वर्ण	स्रोत	जल पर प्रभाव
अम्ल एवं क्षार	कोयले की खाने, वस्त्र, रसायन उद्योग इस्पात	जल का p.H. स्तर अव्यवस्थित होना, परिस्थितिक संतुलन में परिवर्तन।
क्लोरीन, फिनॉल, फार्मलीन, हाइड्रोजन परऑक्साइड	कागज, वस्त्र, पेंसिलीन, रंग रासायनिक उद्योग	सूक्ष्म जीवाणुओं का विनाश, स्वाद में परिवर्तन, दुर्गंध
लोहा, कैल्सियम, मैग्नीशियम, क्लोरीन, सल्फेट	सीमेन्ट, धातु, कांच, चीनी मिट्टी उद्योग	जल की कठोरता, खारेपन का उत्पन्न होना।
गंधदायक पदार्थ	साबुन, चमड़े की रंगाई, खाद्य एवं मांस प्रकरण, पेट्रोलियम परिष्करण	तेल, चर्बी, ग्रीस आदि से विलेय आक्सीजन की मात्रा कम होना
जीवाणुओं द्वारा अपघटित पदार्थ	चीनी, शराब उद्योग, चर्म, संस्करण दुग्ध प्रक्रमण, कागज, वस्त्र उद्योग	मत्स्य विनाश, दुर्गंध
विशैले पदार्थ आक्सैनिक सायनाइड, क्रोमियम, लेड, कैडमियम, जिंक, लोहा, तांबा	चर्म, संस्करण वस्त्र उद्योग, बैटरी बनाना, प्लेट बनाना, क्लोरीन उत्पादन	मछली का विनाश, विषैला का प्रभाव
रोगजन्या जीवाणु, विषाणु	चमड़े की रंगाई, मुर्गी पालन अवशिष्ट जल	प्रदूषित जल से सिंचाई करने पर मानव, पशु और पौधों में संक्रमण रोगों का उत्पन्न

कृषि बाहिःस्राव :– फसलों से अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए नई–नई पद्धतियों को उपयोग में लाया गया। हरित क्रांति इसी का परिणाम है। नई पद्धतियों के अंतर्गत रासायनिक उर्वरकों, अपतृण नाशियों कीटनाशी दवाओं एवं सिंचाई के उपयोग में वृद्धि हुई हैं। अधिकांश उर्वरक अकार्बनिक फास्फेट, नाइट्रोजन होते हैं। उर्वरक वर्षा जल या सिंचाई जल के साथ वहकर भूजल में, पोखरों, तालाबों, नदियों तक पहुँच जाता है, नाइट्रोजन की अधिक मात्रा से विशेषकर झील में यूट्रोफिकेशन की प्रक्रिया तीव्र हो जाती हैं। जिससे जल में शैवालों की वृद्धि हो जाती है। शैवाल के मृत होने से अपघटक बैक्टीरिया उत्पन्न हो जाते हैं। जैविक पदार्थों के अपघटन की प्रक्रिया से जल मे ऑक्सीजन की कमी हो जाती है। जलीय जीवों की कमी होने लगती है। जल प्रदूषित हो जाता है।

ऊष्मीय प्रदूषण :– उत्पादक संयंत्रों में विभिन्न रिऐक्टरों के अतितापन के निवारण के लिए नदी एवं तालाबों के जल का उपयोग किया जाता है। शीतलन प्रक्रिया के फलस्वरूप उष्ण जल पुनः जलस्रोतों में मिलाया जाता है। इससे जल स्रोतों के जल में ताप वृद्धि हो जाती है। यह हानिकारक होती है। उष्णीय प्रदूषण का प्रभाव जलीय जीवों पर पड़ता है। जल के तापमान बढ़ने से ऑक्सीजन की विलेयता कम हो जाती है। लवणो की मात्रा बढ़ जाती है। जीवाणुओं पर अनेक परिवर्तन होते हैं। जीन संरचना में परिवर्तन हो जाता हैं।

तैलीय प्रदूषण :– समुद्रों में तेल प्रदूषण की संभावना अधिक है। तेलवाहक जहाजों से तेल समुद्र में गिरता है। कभी आग भी लग जाती है। यह तेल विलेय ऑक्सीजन की मात्रा को कम करता है। जलीय जीवों का जीवन समाप्त हो जाता है।

जल प्रदूषण की पहचान के लिए मापदंड निर्धारित किए गए हैं, जिनकी कमी या अधिकता होने पर जल प्रदूषित माना जाता है। भौतिक मापदंड– इसमें रंग, प्रकाश संवहन एवं ठोस पदार्थ आते हैं।

रासायनिक मापदंड – इसमें विलेय ऑक्सीजन, बी.ओ.डी., सी.ओ.डी., p.H. मान., अम्लीयता या क्षारीयता, भारी धातुएँ आते हैं।

जैविक मापदंड़– इसमें जीवाणु, कॉलिफार्म, शैवाल वाइरस आते हैं।

पेयजल स्रोत (बिना उपचार)	कॉलिफार्म एम.पी.एम. प्रकाशावरोध बी.ओ.डी. सी.ओ.डी.	50 / 100 10 इकाई से कम 2 मिग्रा. / लि. से कम 6 मि.ग्रा. / लि से कम
पेयजल स्रोत (उपचार के बाद)	कॉलिफार्म एम.पी. बी.ओ.डी.	500 / 100 मि.लि. से कम 4 मि.ग्रा / लि से कम
स्नान, तैराकी एवं मनोरंजन	कॉलिफार्म एम.पी.एम. बी.ओ.डी. सी.ओ.डी.	5000 / 100 मि.ली. से कम 10 इकाई से कम 3 मि.ग्रा. / लि से कम

जल प्रदूषण से क्षेत्र विशेष की जलीय परिस्थितिक तंत्र प्रभावित हो रहा है। जल प्रदूषण का प्रभाव कृषि भूमि पर पड़ता है। जब प्रदूषित जल कृषि भूमि से गुजरता है तो उस भूमि की उर्वरता नष्ट हो जाती है। रंगाई–छपाई उद्योग से निःसृत दूषित जल कृषि भूमि को बंजर बना रहा है। प्रदूषित जल से सिंचाई करने से कृषि उत्पादन प्रभावित होता है। उत्पादन चक्र में प्रदूषक आ जाते हैं जिसे उत्पादन कम हो जाता है। प्रदूषित जल से जल स्रोत का संपूर्ण जल परिस्थितिकीय तंत्र अव्यवस्थित हो जाता हैं।

जल प्रदूषण एक गंभीर समस्या बनती जा रही है। यदि इसकी रोकथाम की व्यवस्था न की तो समस्या विकराल रूप धारण कर लेगी। अतः रोकथाम करना आवश्यक हो गया है। जल प्रदूषण को बढ़ावा देने वाली प्रक्रियाओं पर रोक लगाना आवश्यक है। किसी प्रकार के अपशिष्ट या अपशिष्ट युक्त बहिःस्राव को जल स्रोतों से मिलने नहीं देना चाहिए।

घरों से निकलने वाले मलिन जल एवं वाहित मल को एकत्रित कर संशोधन संयंत्रों में पूर्ण उपचार करना चाहिए। कुओं, तालाबों के चारों ओर दीवार बनाकर विभिन्न प्रकार की गंदगी को रोकना होगा। जलाशयों के आस–पास गंदगी करने, नहाने, कपड़े धोने पर रोक लगानी होगी। पशुओं के जलाशय में नहलाने पर भी रोक लगानी होगी। उद्योगों के बहिःस्राव और अपशिष्टों का बिना उपचार किए ज़ल स्रातों में विसर्जित करने पर रोक लगानी होगी।

कृषि कार्यों में उर्वरकों एवं कीटानाशकों की मात्रा पर अंकुश लगाना चाहिए। समय–समय पर जलाशयों में उपस्थित अनावश्यक जलीय पौधों एवं तल में एकत्रित कीचड़ को निकाल देना चाहिए।

जन–साधारण में जल प्रदूषण के कारणों, दुष्प्रभावों एवं रोकथाम की विधियों के बारे में जागरूकता उत्पन्न करनी होगी। सरकार द्वारा बनाये गये कानूनों का सही रूप में पालन करना होगा।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि जल प्रदूषण एक गंभीर समस्या है। इससे सभी प्रभावित हो रहे हैं। इस ओर सबका ध्यान आकर्षित करने की आवश्यकता है। सबके प्रयासों से ही जल प्रदूषण की समस्या समाप्त हो सकती है।

संदर्भ :–

1. एनवायरन्मेन्टल केमिस्ट्री, कुदेशिया वी.पी. , प्रगति प्रकाशन मेरठ।

2. पर्यावरण तथा प्रदूषण, रघुवंशी अरूण एवं चंद्रलेखा, हिंदी ग्रन्थ एकादमी, भोपाल।

3. पर्यावरण प्रदूषण, पशुपति नाथ एवं सिद्धनाथ, चुघ पब्लिकेशन, इलाहाबाद।

4. मानव पर्यावरण की सामाजिक समस्याएँ, प्रसाद गुरू, लोकहित प्रकाशन, लखनऊ।

○○○

लेखक परिचय

1. श्री सतीश चन्द्र सक्सेना – जनकपुरी नई दिल्ली
2. प्रो० आर.एस. सेंगर – कृषि जैविकी विभाग सरदार वल्लबभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्व विद्यालय, मेरठ
3. श्री मनोज कुमार शर्मा – यथोपरि
4. सु श्री रेशू चौधरी – यथोपरि
5. श्री संजय चौधरी – जे एंड के – 16 बी दिलशाद गार्डन, दिल्ली–95
6. प्रो० नित्यानंद चौधरी – कॉलेज आफ इनर्जी स्टडीज, यूनिवर्सिटी ऑफ पेट्रोलियम एन्ड इनर्जी स्टडीज, देहरादून, उत्तराखंड
7. श्री संजय चौधरी – यथोपरि
8. श्री विनय कुमार मिश्रा – लाख उत्पादन विभाग, भारतीय राल व गोंद अनुसंधान संस्थान, रांची
9. डॉ. दिनेश मणि – 35/3 जवाहरलाल नेहरू रोड, जोर्ज टाउन, इलाहाबाद, 211002, उ.प्र.
10. डॉ. गजेंद्र कुमार नामदेव – भूगोल विभाग, शासकीय स्वयंशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा मध्य प्रदेश
11. डॉ. सी.पी.सिंह – सहायक प्रोफेसर प्राणिविज्ञान, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नारायणनगर पिथौरागढ़ (उत्तराखंड)
13. डॉ. चंद्र प्रकाश शुक्ल –
13. श्री एन. के बोहरा – प्लॉट नं. 389, गली नं. 10, मिल्कमैन कॉलोनी पाली रोड़ जोधपुर, राजस्थान
14. रेशमा कुमारी – वनस्पति एवं सूक्ष्मजीव विज्ञान विभाग, गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार
15. प्रो. आर. सी. दुबे – यथोपरि
16. डा. दीपक कोहली – 5/104 विपुल खंड गोमतीनगर लखनऊ
17. श्री नवनीत कुमार गुप्ता – परियोजना अधिकारी एडूसेट, विज्ञान प्रसार सी 24, कुतुब संस्थानिक क्षेत्र, नई दिल्ली

18. प्रेमचंद श्रीवास्तव – अनुकंपा वाई 2 सी 116/5 त्रिवेणीपुरम् झूंसी, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश
19. डॉ. एन.के. चतुर्वेदी – 26 कावेरी एन्क्लेव फेज 2, निकट स्वर्ण जयंती नगर, रामघाट रोड अलिगढ़, उ. प्र.

○○○

शब्दावली आयोग के प्रकाशन

शब्द–संग्रह

बृहत् पारिभाषिक शब्द-संग्रह

विज्ञान खंड-1, 2	174.00
विज्ञान खंड-1, 2	150.00
विज्ञान (हिंदी-अंग्रेजी)	236.00
मानविकी और सामाजिक विज्ञान खंड 1, 2	292.00
मानविकी और सामाजिक विज्ञान (हिंदी-अंग्रेजी)	350.00
कृषि विज्ञान	278.00
आयुर्विज्ञान, भेषज विज्ञान, शारीरिक नृविज्ञान	239.00
आयुर्विज्ञान, कृषि एवं इंजीनियरी (हिंदी-अंग्रेजी)	48.00
मुद्रण इंजीनियरी	48.00
इंजीनियरी (सिविल, विद्युत्, यांत्रिकी)	340.00
पशुचिकित्साविज्ञान	82.00
प्राणिविज्ञान	311.00

विषयवार–शब्दावलियाँ / परिभाषा कोश

अर्थशास्त्र

अर्थमिति परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	17.00
अर्थशास्त्र परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	117.00
अर्थशास्त्र शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-बोडो)	185.00
अर्थशास्त्र शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-ओडिया)	183.00
अर्थशास्त्र शिक्षार्थी शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-हिंदी)	137.00
अर्थशास्त्र मूलभूत शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	नि:शुल्क

आयुर्विज्ञान

आयुर्विज्ञान शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-ओडिया)	450.00
आयुर्विज्ञान के सामान्य शब्द एवं वाक्यांश (अंग्रेजी-तमिल-हिंदी)	279.00
आयुर्विज्ञान परिभाषा कोश (शल्य विज्ञान) (अंग्रेजी-हिंदी)	338.00
आयुर्विज्ञान मूलभूत शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	नि:शुल्क
औषधि प्रतिकूल प्रतिक्रिया शब्दावली	273.00

○○○

आयुर्वेद परिभाषा कोश (संस्कृत-अंग्रेजी)	260.00
आयुर्विज्ञान शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-हिंदी)	517.00
रोग निदान एवं विकृति विज्ञान शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-हिंदी)	401.00
आयुर्विज्ञान शब्द-संग्रह (संस्कृत-अंग्रेजी)	मुद्रणाधीन
आयुर्विज्ञान शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-ओडिया)	404.00

इंजीनियरी

सिविल इंजीनियरी परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	61.00
रासायनिक इंजीनियरी शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-हिंदी)	51.00
विद्युत् इंजीनियरी परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	81.00
यांत्रिक इंजीनियरी परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	94.00
पर्यावरण इंजीनियरी मूलभूत शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	नि:शुल्क
यांत्रिक इंजीनियरी मूलभूत शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	नि:शुल्क

इतिहास

इतिहास परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	20.50

कंप्यूटर विज्ञान एवं सूचना प्रौद्योगिकी

कंप्यूटर विज्ञान परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	102.00
कंप्यूटर विज्ञान शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	57.00
कंप्यूटर विज्ञान शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-बोड़ो)	78.00
सूचना प्रौद्योगिकी शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-हिंदी)	231.00
प्रसारण तकनीकी शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	310.00
कंप्यूटर विज्ञान की मूलभूत शब्दावली (अंग्रेजी-बोड़ो)	नि:शुल्क
दूरसंचार की मूलभूत शब्दावली (अंग्रेजी-बोड़ो)	नि:शुल्क

कला और संगीत

पाश्चात्य संगीत परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	28.55
नाट्यशास्त्र, फिल्म एवं टेलीविजन परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	202.00
नाट्यशास्त्र, फिल्म एवं टेलीविजन शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	75.00

कृषि

रेशम विज्ञान शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-हिंदी)	50.00
पादप आनुवंशिकी परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	75.00
कृषि कीटविज्ञान परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	75.00
मृदा विज्ञान परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	77.00
वानिकी शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-हिंदी)	447.00

कृषि विज्ञान मूलभूत शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	नि:शुल्क
गणित	
गणित शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-हिंदी)	143.00
गणित परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	203.00
सांख्यिकी परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	18.00
गणित शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-ओडिया)	189.00
गणित शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-ओडिया)	335.00
गणित की मूलभूत शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	नि:शुल्क
गुणता नियंत्रण	
गुणता नियंत्रण शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी तथा हिंदी-अंग्रेजी)	38.00
गृह विज्ञान	
गृह विज्ञान शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-हिंदी)	60.00
गृह विज्ञान मूलभूत शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	नि:शुल्क
जीव विज्ञान, वनस्पति विभाग, सूक्ष्म जीव विज्ञान	
सांस्कृतिक नृविज्ञान परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	24.00
पुरावनस्पतिविज्ञान परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	80.50
वनस्पतिविज्ञान परिभाषा कोश (संशोधित एवं परिवधित संस्करण)(अंग्रेजी-हिंदी)	75.00
पादप आनुवंशिक परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	75.00
सूक्ष्मजैविकी परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	45.00
कोशिका जैविकी परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	62.00
पादप आनुवंशिक परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	75.00
वनस्पतिविज्ञान शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-हिंदी)	86.00
सूत्रकृमि विज्ञान परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	125.00
कोशिका जैविकी परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	121.00
कोशिका तथा अणुजैविकी परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	348.00
प्राणिविज्ञान परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	216.00
प्राणिविज्ञान शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-ओडिया)	205.00
वनस्पतिविज्ञान शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-ओडिया)	208.00
प्रबंध विज्ञान	
प्रबंध विज्ञान परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	170.00
मनोविज्ञान	

मनोविज्ञान शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	247.00
मनोविज्ञान मूलभूत शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	नि:शुल्क
मनोविज्ञान शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-ओडिया)	108.00
मनोविज्ञान परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	मुद्रणाधीन
भाषा विज्ञान	
भाषा विज्ञान परिभाषा कोश खंड-1 (अंग्रेजी-हिंदी)	89.00
भाषा विज्ञान शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी तथा हिंदी-अंग्रेजी)	113.00
भाषा विज्ञान परिभाषा कोश खंड-2 (अंग्रेजी-हिंदी)	59.00
भूगोल	
मानचित्र विज्ञान परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	231.00
भूगोल शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-हिंदी)	200.00
भूगोल की मूलभूत शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	नि:शुल्क
भूगोल परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	10.00
मानव भूगोल परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	18.00
प्राकृतिक विपदा शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	17.00
जलवायु विज्ञान शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	131.00
भूगोल शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-बोडो)	515.00
भूगोल शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-ओडिया)	515.00
भूविज्ञान	
पेट्रोलियम प्रौद्योगिकी परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	173.00
शैलविज्ञान परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	153.00
भूविज्ञान शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-हिंदी)	88.00
भूविज्ञान परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	63.00
खनन एवं भूविज्ञान शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-हिंदी)	32.00
संरचनात्मक भूविज्ञान एवं विवर्तनिकी शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-हिंदी)	15.00
भूविज्ञान की मूलभूत शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	नि:शुल्क
संरचनात्मक भूविज्ञान परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	13.50
कोयला उद्योग की मूलभूत शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	नि:शुल्क
पर्यावरण विज्ञान शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-हिंदी)	381.00
प्राणिविज्ञान शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-हिंदी-बोडो)	417.00
प्राणिविज्ञान मूलभूत शब्दावली	नि:शुल्क

पर्यावरण विज्ञान मूलभूत शब्दावली	नि:शुल्क
जैव प्रौद्योगिकी मूलभूत शब्दावली	नि:शुल्क
वनस्पतिविज्ञान की मूलभूत शब्दावली	नि:शुल्क
जीवविज्ञान शिक्षार्थी शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-हिंदी)	212.00
पर्यावरण विज्ञान परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	510.00
दर्शनशास्त्र	
भारतीय दर्शन परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी) खंड-1	151.00
भारतीय दर्शन परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी) खंड-2	124.00
भारतीय दर्शन परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी) खंड-3	136.00
दर्शन शास्त्र शब्द संग्रह (अंग्रेजी-ओडिया)	61.00
दर्शन शास्त्र परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	198.00
पत्रकारिता	
पत्रकारिता परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	87.00
पत्रकारिता एवं मुद्रण शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	12.25
पुरातत्व विज्ञान	
पुरातत्व विज्ञान परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	509.00
पुरातत्व विज्ञान शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-ओडिया)	157.00
पुरातत्व विज्ञान शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-बोडो)	157.00
पुरातत्व और वास्तुकला की मूलभूत शब्दावली	नि:शुल्क
पुस्तकालय विज्ञान	
पुस्तकालय विज्ञान परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	49.00
पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	375.00
प्रशासन	
प्रशासन शब्दावली (अंग्रेजी-ओडिया)	390.00
प्रशासनिक शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी-बोडो)	720.00
प्रशासन शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	20.00
प्रशासनिक शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	20.00
मूलभूत प्रशासनिक शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	नि:शुल्क
राजनीति विज्ञान	
राजनीति विज्ञान परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	343.00
राजनीतिविज्ञान शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-ओडिया)	186.00

राजनीतिविज्ञान शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-बोडो)	211.00
राजनीतिविज्ञान मूलभूत शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	नि:शुल्क
रक्षा	
समेकित रक्षा शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	284.00
लोक प्रशासन	
लोक प्रशासन शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	52.00
वाणिज्य	
वाणिज्य परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	24.00
वाणिज्य शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	259.00
पूँजी बाजार एवं संबद्ध शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	79.00
वाणिज्य शब्दावली (अंग्रेजी-ओडिया)	162.00
वाणिज्य शब्दावली (अंग्रेजी-बोडो)	194.00
वाणिज्य मूलभूत शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	नि:शुल्क
शिक्षा	
शिक्षा परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी), खंड-1	13.50
शिक्षा परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी), खंड-2	99.00
शिक्षा शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-ओडिया)	137.00
शिक्षा शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-बोडो)	97.00
समाजशास्त्र	
समाज कार्य परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	16.25
समाज शास्त्र परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	71.40
समाज शास्त्र शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-ओडिया)	118.00
समाज शास्त्र शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-बोडो)	118.00
अन्य	
अंतरराष्ट्रीय विधि परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	344.00
संसदीय कार्य शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	130.00
सामान्य भूविज्ञान शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	101.00
आर्थिक भूविज्ञान शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	75.00
भूभौतिक शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	67.00
शैलविज्ञान शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	82.00
खनिज विज्ञान शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	130.00
अनुप्रयुक्त भूविज्ञान शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	115.00

संरचनात्मक भूविज्ञान शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	73.00
जीवाश्म विज्ञान शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	129.00
भूविज्ञान शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-ओडिया)	306.00
भूविज्ञान शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-बोडो)	306.00
भौतिकी	
तरल यांत्रिकी परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	10.00
अंतरिक्ष विज्ञान शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	45.00
भौतिकी शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-हिंदी)	119.00
भौतिकी परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	700.00
भौतिकी शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-ओडिया)	203.00
अर्धचालक शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	140.00
इलेक्ट्रॉनिकी शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	349.00
भौतिकी शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-हिंदी-बोडो)	652.00
भौतिकी शिक्षार्थी शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-हिंदी)	219.00
भौतिकी मूलभूत शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	नि:शुल्क
प्लाज्मा भौतिकी शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-हिंदी)	1589.00
रसायन	
उच्चतर रसायन परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	17.00
इस्पात एवं अलौह धातुकर्म शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	55.00
रसायन (कार्बनिक) परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	25.00
धातुकर्म परिभाषा कोश (अंग्रेजी-हिंदी)	278.00
रसायन शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-ओडिया)	137.00
रसायन शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-हिंदी)	592.00
रसायन शिक्षार्थी शब्द-संग्रह (अंग्रेजी-हिंदी)	84.00
रसायन मूलभूत शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	नि:शुल्क
पराज्यामितीय फलन	90.00
भेड़ बकरियों के रोग एवं उनका नियंत्रण	343.00
भारत में भैंस उत्पादन एवं प्रबंधन	540.00
भारत में ऊसर भूमि एवं फसलोत्पादन	559.00
सामाजिक एवं प्रक्षेत्र वानिकी	54.00
समकालीन भारतीय दर्शन के कुछ मानववादी चिंतक : तुलनात्मक एवं समीक्षात्मक अध्ययन	153.00

स्वतंत्रता-पूर्व हिंदी में विज्ञान लेखन	176.00
भारतीय कृषि का विकास	155.00
कोयला (एक परिचय) परिवर्धित संस्करण	425.00
भविष्य की आशा : हिंद महासागर	154.00
इस्पात परिचय	146.00
जैव-प्रौद्योगिकी : अनुसंधान एवं विकास	134.00
पृथ्वी : उद्भव और विकास	86.00
इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी	90.00
प्राकृतिक खेती	167.00
हिंदी विज्ञान पत्रकारिता : कल, आज और कल	167.00
मानसून पवन : भारतीय जलवायु का आधार	112.00
हिंदी में स्वतंत्रता परवर्ती विज्ञान लेखन	280.00
विश्व के प्रमुख धर्मों में धर्म समभाव की अवधाारणा: एक तुलनात्मक अधययन	490.00
मैग्नेसाइटया : एक भूवैज्ञानिक अधययन	214.00
मृदा एवं पादप पोषण	367.00
नलकूप एवं भौमजल अभियांत्रिकी	398.00
पादपों में कीट प्रतिरोध और समेकित कीट प्रबंधन	367.00
पृथ्वी से पुरातत्व	40.00
भारत के सात आश्चर्य	335.00
पादप सुरक्षा के विविध आयाम	360.00
पादप प्रवर्धन एवं पौधशाला प्रबंधान	403.00
खनि आयोजना के सिद्धांत और अनुप्रयोग	2729.00
मृदा संरक्षण एवं प्रबंधन	344.00
कृषिजन्य दुर्घटनाएं	25.00
विश्व के प्रमुख धर्म	118.00
विकास मनोविज्ञान भाग-1	40.00
विकास मनोविज्ञान भाग-2	30.00
बाल मनोविकास	58.00
इलेक्ट्रॉनिक मापन	31.00
सैन्य विज्ञान	100.00
द्रवचालित मशीन	66.50

सूक्ष्म तरंग इंजीनियरी	470.00
लोहीय तथा अलोहीय धातु	68.00
लैटर प्रैस मुद्रण	270.00
विश्व के प्रमुख दार्शनिक	433.00
ठोस पदार्थ यांत्रिकी	995.00
ऐतिहासिक नगर	195.00
प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक नगर	109.00
समुद्री यात्राएँ	79.00
वैज्ञानिक शब्दावली अनुवाद एवं मौलिक लेखन	34.00
विश्व दर्शन	53.00
अपशिष्ट प्रबंधन	17.00
कोयला: एक परिचय	294.00
रत्न विज्ञान: एक परिचय	115.00
पर्यावरणीय प्रदूषण: नियंत्रण तथा प्रबंधन	23.25
वाहितमल एवं आपंक: उपयोग एवं प्रबंधन	40.00
2 दूरीक एवं 2 मानकित समष्टियों में संपात एवं स्थिर बिंदु समीकरणों के साधन	68.00
भारत में प्याज एवं लहसुन की खेती	82.00
पशुओं से मनुष्यों में होने वाले रोग	60.00
मृदा-उर्वरता	410.00
ऊर्जा-संसाधान और संरक्षण	105.00
पशुओं के कवकीय रोग, उनका उपचार एवं नियंत्रण	93.00
आधुनिक बिहार का भूगोल	452.00
बागबानी फसलों के रोग एवं उनका नियंत्रण	मुद्रणाधीन

○○○

पत्रिकाएँ (त्रैमासिक)

सदस्यता शुल्क (उपयुर्क्त दोनों के लिए)

प्रति अंक व्यक्तियों/संस्थाओं के लिए	₹. 14.00	पौंड 1.64	डालर 4.84
वार्षिक चंदा	₹. 50.00	पौंड 5.83	डालर 18.00
प्रति अंक विद्यार्थियों के लिए	₹. 8.00	पौंड 0.93	डालर 10.80
वार्षिक चंदा	₹. 30.00	पौंड 3.50	डालर 2.88

1. आयोग के प्रकाशन, आयोग के बिक्री पटल तथा भारत सरकार के प्रकाशन विभाग के विभिन्न बिक्री पटलों पर उपलब्ध रहते हैं।
2. सभी प्रकाशनों की खरीद पर 25 प्रतिशत की छूट दी जाती है। कुछ पुराने प्रकाशनों पर 75 प्रतिशत तक भी छूट दी जाती है।
3. सभी तरह के आदेशों की प्राप्ति पर आयोग द्वारा इनवाइस जारी किया जाता है। अपेक्षित धनराशि का बैंक ड्राफ्ट या मनीऑर्डर अध्यक्ष, वैज्ञानिक शब्दावली आयोग, नई दिल्ली (Chairman, C.S.T.T., New Delhi) के नाम देय होना चाहिए। चेक स्वीकार्य नहीं होगा। अपेक्षित धनराशि प्राप्त होने के पश्चात् ही पुस्तकें भेजी जाती हैं।
4. चार किलोग्राम वजन तक की सभी पुस्तकें सामान्य डाक/अपंजीकृत पार्सल से भेजी जाती हैं। पुस्तकें भेजने पर पैकिंग तथा फॉर्वर्डिंग चार्ज नहीं लिया जाता है।
5. चार किलोग्राम से अधिक की सभी पुस्तकें सड़क परिवहन से भेजी जाती हैं तथा इन पर आने वाले सभी परिवहन-व्ययों का भुगतान मांगकर्ता द्वारा ही किया जाएगा।
6. पुस्तकें रोड ट्रांसपोर्ट से भेजने के बाद आयोग द्वारा मूल बिल्टी तत्काल पंजीकृत डाक से मांगकर्ता को भेज दी जाती है। यदि निर्धारित अवधि में पुस्तकों को ट्रांसपोर्ट कार्यालय से प्राप्त न किया गया तो उस स्थिति में लगने वाले सभी तरह के अतिरिक्त प्रभारों का भुगतान मांगकर्ता को ही करना होगा।
7. सड़क परिवहन से भेजी जाने वाली पुस्तकों पर न्यूनतम वजन का प्रभार अवश्य लगता है जो प्रत्येक दूरी के लिए अलग-अलग होता है। यदि संबंधित संस्था चाहे तो आयोग में सीधे ही भुगतान करके स्वयं पुस्तकें प्राप्त कर सकती है।
8. दिल्ली तथा उसके नजदीक के क्षेत्रों के आदेशों की पूर्ति डाक द्वारा संभव नहीं होगी। संबंधित संस्था को आयोग के बिक्री एकक में आवश्यक भुगतान करके पुस्तकें प्राप्त करनी होंगी।
9. पुस्तकों की पैंकिंग करते समय इस बात का ध्यान रखा जाता है कि मांगकर्ता को सभी पुस्तकें अच्छी स्थिति में प्राप्त हों। पुस्तकें सामान्य डाक/अपंजीकृत पार्सल/रोड ट्रांसपोर्ट से भेजी जाती हैं। यदि परिवहन में पुस्तकों को किसी भी तरह का नुकसान पहुँचता है तो उसका दायित्व आयोग पर नहीं होगा।
10. सामान्यत: बिल कटने के बाद आदेश में बदलाव या पुस्तकों की वापसी नहीं होगी। यदि क्रय राशि का समायोजन आवश्यक होगा तो राशि वापस नहीं की जाएगी। इस स्थिति में अन्य पुस्तकें ही दी जाएंगी।

बिक्री संबंधी नियम

1. आयोग के प्रकाशन, आयोग के बिक्री पटल तथा भारत सरकार के प्रकाशन विभाग के विभिन्न बिक्री पटलों पर उपलब्ध रहते हैं।
2. सभी प्रकाशनों की खरीद पर 25 प्रतिशत की छूट दी जाती है। कुछ पुराने प्रकाशनों पर 75 प्रतिशत तक भी छूट दी जाती है।
3. सभी तरह के आदेशों की प्राप्ति पर आयोग द्वारा इनवाइस जारी किया जाता है। अपेक्षित धनराशि का बैंक ड्राफ्ट या मनीऑर्डर अध्यक्ष, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, नई दिल्ली (Chairman, C.S.T.T., New Delhi) के नाम देय होना चाहिए। चेक स्वीकार्य नहीं होगा। अपेक्षित ध्नराशि प्राप्त होने के पश्चात् ही पुस्तकें भेजी जाती हैं।
4. चार किलोग्राम वजन तक की सभी पुस्तकें सामान्य डाक/अपंजीकृत पार्सल से भेजी जाती हैं। पुस्तकें भेजने पर पैकिंग तथा फॉवर्डिंग चार्ज नहीं लिया जाता है।
5. चार किलोग्राम से अधिक की सभी पुस्तकें रोड ट्रांसपोर्ट से भेजी जाती है तथा इन पर आने वाले सभी परिवहन–व्ययों का भुगतान मांगकर्ता द्वारा ही किया जाएगा।
6. पुस्तकें रोड ट्रांसपोर्ट से भेजने के बाद आयोग द्वारा मूल बिल्टी तंत्काल पंजीकृत डाक से मांगकर्ता को भेज दी जाती है। यदि निर्धारित अवधि में पुस्तकों को ट्रांसपोर्ट कार्यालय से प्राप्त न किया गया तो उस स्थिति में लगने वाले सभी तरह के अतिरिक्त प्रभारों का भुगतान मांगकर्ता को ही करना होगा।
7. रोड ट्रांसपोर्ट से भेजी जाने वाली पुस्तकों पर न्यूनतम वजन का प्रभार अवश्य लगता है जो प्रत्येक दूरी के लिए अलग–अलग होता है। यदि संबंधित संस्था चाहे तो आयोग में सीधे ही भुगतान करके स्वयं पुस्तकें प्राप्त कर सकती है।
8. दिल्ली तथा उसके नजदीक के क्षेत्रों के आदेशों की पूर्ति डाक द्वारा संभव नहीं होगी। संबंधित संस्था को आयोग के बिक्री एकक में आवश्यक भुगतान करके पुस्तकें प्राप्त करनी होंगी।
9. पुस्तकों की पैंकिंग करते समय इस बात का ध्यान रखा जाता है कि मांगकर्ता को सभी पुस्तकें अच्छी स्थिति में प्राप्त हों। पुस्तकें सामान्य डाक/अपंजीकृत पार्सल/रोड ट्रांसपोर्ट से भेजी जाती हैं। यदि परिवहन में पुस्तकों को किसी भी तरह का नुकसान पहुंचता है तो उसका दायित्व आयोग पर नहीं होगा।
10. सामान्यतः बिल कटने के बाद आदेश में बदलाव या पुस्तकों की वापसी नहीं होगी। यदि क्रय राशि का समायोजन आवश्यक होगा तो राशि वापस नहीं की जाएगी। इस स्थिति में अन्य पुस्तकें ही दी जाएंगी।

प्रकाशन विभाग, भारत सरकार के बिक्री केंद्रों की सूची

क्र.सं.	पता
1.	**प्रकाशन नियंत्रक** प्रकाशन विभाग, (शहरी मामले व रोजगार मंत्रालय) सिविल लाइन्स, दिल्ली – 110054
2.	**किताब महल** प्रकाशन विभाग, भारत सरकार बाबा खड़ग सिंह मार्ग, स्टेट एंपोरियम बिल्डिंग, यूनिट नं. 21, नई दिल्ली – 110001
3.	**पुस्तक डिपो** प्रकाशन विभाग, भारत सरकार के. एस. राय मार्ग, कोलकाता–700001
4.	**बिक्री काउंटर** प्रकाशन विभाग, भारत सरकार सी. जी. ओ. कॉम्प्लेक्स न्यू मेरीन लाइन्स, मुंबई – 400020
5.	**बिक्री काउंटर** प्रकाशन विभाग, उद्योग भवन गेट नं. 3, नई दिल्ली –110001
6.	**बिक्री काउंटर** प्रकाशन विभाग, भारत सरकार (लॉयर्स चैंबर) दिल्ली उच्च न्यायालय नई दिल्ली – 110003
7.	**बिक्री काउंटर** प्रकाशन विभाग संघ लोक सेवा आयोग, धौलपुर हाउस, नई दिल्ली – 110001

© भारत सरकार
प्रकाशन नियंत्रक

संयुक्तांक 97–98 पी.सी.एस.टी.टी. (4–9) 2016
1000

Mobile App of Administrative Terms Glossary is now available in Google Play Store.

Step-1: Search CSTT • Step-2: Download • Step-3: Open to use

वैतश आयोग द्वारा प्रकाशित शब्दावलियाँ, परिभाषा-कोश मोबाईल ऐप तथा ई-पुस्तक के रूप में उपलब्ध होंगे।

प्रोफेसर अवनीश कुमार
अध्यक्ष

Glossaries and Definitional Dictionaries published by CSTT shall now be available in mobile apps and e-books format.

Professor Avanish Kumar
Chairman

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
मानव संसाधन विकास मंत्रालय (उच्चतर शिक्षा विभाग)
पश्चिमी खंड-7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली - 110066.
फोन नं. 011-26105211 • वेबसाइट : www.cstt.nic.in
Commission for Scientific and Technical Terminology
Ministry of Human Resource Development
(Department of Higher Education)
West Block No. 7, Ramakrishnapuram, New Delhi - 110066.
Phone: 011-26105211 • Website: www.cstt.nic.in

मुद्रण निदेशालय, भारत सरकार मुद्रणालय, मिन्टो रोड, नई दिल्ली–110002, द्वारा मुद्रित।
एवं प्रकाशन नियंत्रक, सिविल लाइन्स, दिल्ली–110054 द्वारा प्रकाशित, 2018